डॉ. ज्योति कौर
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
श्री गुरु गोबिन्द सिंह कॉलेज ऑफ कॉमर्स
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

भक्तिकालीन काव्य में सामाजिक चेतना
(कबीर के विशेष संदर्भ में)

भक्ति आंदोलन सिर्फ धार्मिक आन्दोलन नहीं है, बल्कि उस सामाजिक-सांस्कृतिक संवाद से उपजा आंदोलन है, जिसका संबंध सामाजिक सरोकारों से है। ऐसा नहीं है कि इसकी शुरुआत भक्ति आन्दोलन से होती है बल्कि यह संवाद लंबे समय से चला आ रहा था। लेकिन इसको मुखर अभिव्यक्ति मिलती है भक्तिकाल में। भक्तिकाल अपने साहित्य की प्रवृत्तिगत विशेषताओं की दृष्टि से भी अप्रतिम है। भाव, भाषा और विचारों की जैसी अभिव्यक्ति इस काल में हुई है वैसी अन्यत्र किसी भी साहित्य में देखने को नहीं मिलती है। समष्टिपरकता जैसी विशेषता ने इसे बहुजनहिताय की मूलभूत चेतना से जोड़ दिया था। यही कारण है कि भक्तिकाल को हिंदी साहित्य का स्वर्णकाल कहते हैं। इस काल में एक तरफ जहाँ सामंतवाद-विरोधी चेतना मौजूद है तो वहीं दूसरी तरफ ब्राह्मणवादी पुरोहितवादी व्यवस्था के खिलाफ भी कवियों ने कवितायें लिखी हैं। इस काव्य में लोकमंगल का पवित्र भाव अन्तर्निहित है। समन्वय की विराटचेतना इस काव्य की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। जाति, धर्म और सम्प्रदाय आदि की सीमाओं का अतिक्रमण करता हुआ भक्तिकालीन काव्य भारत की करोड़ों जनता का साहित्य बन जाता है।

हिंदी साहित्य में भक्ति आन्दोलन का आविर्भाव कबीर और उनकी रचनाओं से होता है। कबीर निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे। सिर्फ कबीर ही नहीं वरन सभी संत कवियों के यहाँ ब्रह्म निर्गुण, निराकार, व अमूर्त है। उनकी ब्रह्म के रूप और आकार में आस्था नहीं थी। इनका लक्ष्य निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी उनके निर्गुण ब्रह्म के संदर्भ में कहते हैं कि ''जब कबीरदास निर्गुण भगवान का स्मरण करते हैं तो उनका उद्देश्य यह होता है कि भगवान के गुणमय शरीर की जो कल्पना की गयी है वह रूप उन्हें मान्य नहीं है।''[1] यहाँ निर्गुण का अर्थ 'गुणहीन' नहीं 'गुणातीत' है। भक्तिकाल के संत कवि निर्गुण ईश्वर को नहीं मानते क्योंकि ये सामाजिक समानता की माँग करते हुए पहले की विषमतामूलक तथा आडम्बरप्रधान धार्मिक परम्परा को बदलना चाहते थे। कबीर निरक्षर थे, 'कागद' और 'मसि' को उन्होंने छुआ नहीं था। निम्न वर्ण और निम्न वर्ग से होने के कारण उन्हें शास्त्रों से परहेज है क्योंकि उनका मानना है कि शास्त्र ही उनके शोषण ववंचन को वैध बनाते हैं। इसीलिए कबीर शास्त्रों पर करारी चोट करते हैं क्योंकि उनका मानना है कि शास्त्र ही 'लकीर का फ़क़ीर' बनाते हैं जीवन को तार्किकता से समझने की ताकत नहीं देते।

कबीर के अन्दर लौकिक सत्ता के खिलाफ वैराग्य का भाव था तो वही पारलौकिक सत्ता के प्रति अनुराग का भाव था। इनके काव्य का मूल लक्ष्य सभी लोगों का कल्याण है। आगे चलकर कबीर

के इस निर्गुण परम्परा से नानक, दादू दयाल, रज्जब, सेना आदि कवि भी जुड़ते चले जाते हैं। ये सभी संत ब्रह्म और जीव के अद्वैत पर बल देते थे और इसके लिए ज्ञान और कर्म की वकालत करते हैं।

कबीर क्या थे ? यह कहना बहुत ही मुश्किल है, कबीर क्या नहीं थे ये सोचना अधिक समीचीन है। भक्त, साधक, संत योगी, समाजसुधारक, युगनेता, कवि, पाखंडों के विरोधी, समय के विराट क्रांतिकारी, आदि। कबीर में युग की आवश्यकता का सब कुछ विद्यमान था। कबीर मर्यादाओं के पिछलग्गू नहीं थे। वो सीमाओं पर विश्वास नहीं करते थे। उन्होंने अपनी परिभाषाएँ स्वयं स्थापित की और इस कहावत को चरितार्थ किया—

लीक-लीक पर सब चले, लीकहिं चले कपूत।
ये तीनों बेलीक हैं, शायर, सिंह, सपूत॥

जहाँ तक कबीर की सामाजिकता का प्रश्न है तो हम कह सकते हैं कि कबीर ने अपनी वाणी का प्रयोग साहित्य के लिए कम जनजीवन के कल्याण के लिए अधिक किया। कबीर पहले ऐसे कवि हैं, जिन्होंने आध्यात्म की उचाइयों को छूते हुए भी समाज सुधार पर विधिवत बल दिया। कबीर के समय में भी राजनीतिक दृष्टि से मुसलमान ही शासक थे और वो हिन्दू जनता पर धार्मिक दृष्टि से अपना आधिपत्य चाहते थे। ऐसी राजनीतिक स्थिति के कारण हिन्दू और मुसलमान दोनों ही सम्प्रदायों के धार्मिक विचार विषाक्त हो गए थे। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय जन जीवन रुग्ण हो गया था। चूँकि कबीर एक युगद्रष्टा और युगस्रष्टा दोनों ही थे इसीलिए उन्होंने अपने युग की आवश्यकता के अनुसार अपनी वाणी का उपयोग किया।

कबीर दास ने अपनी वाणी के माध्यम से समाज में व्याप्त विकृत वर्ण व्यवस्था, जातिभेद, वर्गभेद, छुआछूत, आदि का जमकर विरोध किया। उनका मानना है कि वर्ग और जातियों का निर्माण मनुष्य ने स्वयंकिया है।सभी मनुष्य चूँकि उसी परमसत्ता का ही अंश है,अतः सभी समान हैं, कोई भी छोटा या बड़ा नहीं है। कबीर कहते हैं—

"एक बूंद एक मल मूतर, एक चाम एक गूदा।
एक जोति से सब जग उपजा, को बाभन को सूदा॥"[2]

कबीर आगे कहते हैं कि जब ब्राह्मण और शुद्र की रगों में बहने वाले खून में कोई भेद नहीं है तो फिर उनमें जातिगत भेद क्यूँ ? क्या उच्च जातियों की नसों में दूध बहता है रक्त नहीं—

"हमारे कैसे लोहू तुम्हारे कैसे दूध
तुम कैसे ब्राम्हण पांडे हम कैसे सूद॥"[3]

छुआछूत जैसी बुराई का विरोध करते हुए कबीर कहते हैं—

"हिन्दू अपनी करें बड़ाई, गागर छुअन न देई।
वेश्या के पायन तर सोवें यह देखो हिन्दुआई॥"[4]

कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों के बाह्य आडम्बरों का जमकर विरोध करते हैं।आज के दौर में भी हमारे समाज में धार्मिक आडंबर और अंधविश्वास सभी जगह मौजूद है। इन आडंबरों के रहते हम कभी भी वैज्ञानिक और तर्कयुक्त समाज का निर्माण नहीं कर सकते। कबीर का महत्व यह है

कि वे सिर्फ हमें आडंबरों और अंधविश्वासों से दूर ही नहीं करते बल्कि उन पर तार्किक ढंग सवाल खड़े करना भी सिखाते हैं। उनका मानना है कि ऐसा वैज्ञानिक स्वभाव अगर सभी का हो जाए तो निश्चित तौर पर ही तमाम रूढ़ियाँ और अतार्किक प्रथाएँ समाप्त की जा सकती हैं। उन्होंने रोज़ा, नमाज, छापा, तिलक, माला, गंगास्नन, तीर्थाटन आदि का जमकर विरोध किया और शुद्धाचरण व मन की पवित्रता पर विशेष बल दिया। इस संदर्भ में वे कहते हैं—

''माला फेरतजुग भया, फिरा न मन का फेर।
करका मनका डारि दे, मन का मनका फेर॥''[5]

कबीर की सोच तर्कवादी और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से युक्त थी। उनकी तर्कवादी सोच का एक पहलू उनके आडंबर विरोधी नजरिये में भी दिखाई देता है। मध्यकाल के संत होने के कारण उनमें ईश्वर के प्रति गहरी आस्था थी। किंतु वे अपनी सहज तार्किकता से समझाते थे कि ईश्वर, जो अपने आप में खुद ही पूर्ण है, किसी भी प्राणी से यह अपेक्षा कभी नहीं करता होगा कि वह उसके नाम पर बलि चढ़ाए, तीर्थटन करे या कर्मकांड करें। अपनी इसी विचार के चलते कबीर ने हिन्दू और मुसलमान के धर्मों में प्रचलित आडम्बरों पर प्रहार किया। उन्होंने देखा कि हिन्दू समाज में मुंडन कराने की प्रथा अपने प्रचंड रूप में विद्यमान है। उनका मानना है कि विशेष रूप से मठ-मंदिर में ईश्वर के साधक इस लालच में गंजे हो जाते हैं कि इस परंपरा पर चलकर ईश्वर तथा स्वर्ग की उपलब्धि कुछ आसान हो जाएगी। कबीर अपने काव्य में इस कुरीति पर जबरदस्त व्यंग्य करते हुए कहते हैं—

''मूंड मुड़ाए हरि मिले, सब कोइ लेय मुड़ाय।
बार बार के मूंडते, भेड़ न बैकुण्ठ जाय॥''[6]

गंगा में नित्य स्नान कर के अपने को पवित्र कहने वालों पर भी कबीर व्यंग्य करते हैं—

''नहाये धोये क्या भया, जो मन का मैल न जाय।
मीन सदा जल में रहे, धोये बास न जाय॥''[7]

कबीर हिन्दू होते हुए भी मुसलमान के घर पले इसलिए उनके मन में दोनों धर्मों के प्रति सम्मान का भाव था। उन्हें सभी धर्मों की बातें प्रिय थी। उनका मानना था कि सभी धर्म मानव कल्याण के लिए हैं। यही कारण है कि कबीर ने सभी धर्मों का सार तत्व ग्रहण किया और उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों के बीच बढ़ते हुए संघर्ष, भेदभाव आदि को दूर करने के लिए दोनों को जमकर फटकार लगाई और यह समझाने का प्रयास किया कि राम-रहीम एक हैं और उनमें कोई भेद नहीं है—

''हिन्दू कहे मोहि राम पियारा, तुरक कहे रहिमाना।
आपस में दोउ लरि-लरि मुए, मरम न काहू जाना॥''[8]

कबीर ने मूर्तिपूजा, नमाज और अन्य कर्मकांडों का विरोध करते हुए सामान्य जनता को यह समझाने का प्रयास किया कि मूर्ति-पूजा से भगवान नहीं मिलते उसे पाने के लिए अच्छे कर्म करने चाहिए। यही कारण है कि वो समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास करते हैं—

''पाहन पूजे हरी मिलै, तौ मै पूजूं पहार।
तातै यह चाकी भली, पीस खाय संसार॥''[9]

ऐसे ही मुसलमानों के लिए कहते हैं—

''कांकर पाथर जोरि के, मस्जिद लई चुनाय।
ता चढ़ मुल्ला बांग दे, का बहरा हुआ खुदाय॥''[10]

कबीरदास अहिंसा के समर्थक थे। कबीर ने अपने काव्य में अहिंसा की बात भी अत्यंत गहराई के साथ बताई है। उन्होंने विभिन्न धर्मों और उनके अनुयायियों जैसे महावीर (जैन धर्म) और बुद्ध (बौद्ध धर्म) की परंपरा के अलावा वैष्णव परंपरा से भी अहिंसा का सिद्धान्त सीखा और निजी जीवन में इसका खूब उपयोग भी किया। उनका कहना था कि ''साईं के सब जीव हैं, कीरी कुंजर दोय।'' इसके साथ-साथ कबीर ने धर्म के नाम पर की जाने वाली हिंसा का भी विरोध किया। हिन्दुओं में शाक्तों और मुसलमानों में कुर्बानी देने वाले लोगों को फटकारते हुए कहा कि दिन में रोजा रखते हैं और रात में गाय काटते हैं, भला यह कैसा न्याय है? आप लोगों के इस कार्य से खुदा कैसे प्रसन्न हो सकता है?

''दिन में रोजा रहत हैं, रात हनत हैं गाय।
यह तौ खून वह बंदगी, कैसे खुसी खुदाय॥''[11]

कबीर कहते हैं कि हिन्दू लोग गाय को माता कहते हैं क्योंकि वह हमें दूध पिलाती है, इसलिए उसका वध करना माता का वध करने के बराबर है—

''जाको दूध धाई करि पीजै, ता माता का वध क्यों कीजै।''[12]

कबीर कहते हैं कि लोगों को यह देखकर सबक लेना चाहिए कि घास-पत्ती खाने वाली बकरी की खाल खींची ली जाती है लेकिन जो लोग बकरी खाते हैं उनकी क्या दशा होगी?

''बकरी पाती खात है, ताकी काढ़ीखाल।
जो नर बकरी खात है, ताको कौन हवाल॥''[13]

कबीर की सामाजिकता पर सबसे गंभीर प्रश्न नारीवादी चिंतकों द्वारा लगाया गया है। उनका मानना है की कबीर नारी की समस्याओं को दिखाने की बजाय नारी की अनावश्यक निंदा करते हुए नजर आते हैं। दरअसल, कबीर मध्यकाल की जिस परंपरा में दीक्षा प्राप्त किए थे, उसमें स्त्रियों को 'माया' समझा जाता था और उन पर आरोप लगता था कि वे पुरुषों का ध्यान भटकाने में लगी रहती हैं।आज यह सोचकर आश्चर्य होता है कि कबीरदास ने नारी को कितना कुछ कहा है। वे कहते हैं—

''नारी की झाईं पड़त, अंधा होत भुजंग।
कबिरा तिनकी कौन गति, जे नित नारी के संग॥''[14]

कबीर ने मानव जाति के लिए ऐसे धर्म की स्थापना की जिसे मन सहज ही स्वीकार कर लेता है। उन्होंने दिखावे पर नहीं बल्कि अंतरू साधना पर बल दिया जिसमें सत्य, अहिंसा, प्रेम, परोपकार, ब्रह्मचर्य, इंद्रिय-निग्रह, सत्संग आदि का समावेश है। इस सबकी महिमा का गुणगान कर उन्होंने लोगों को लोकमंगल के कार्यों के लिए प्रेरित किया। उनकी कही गयी बात को आज भी हमारा हृदय बहुत सहजता से स्वीकार करता है।

संदर्भ

1. कबीर, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ 101
2. कबीर ग्रंथावली, चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद, प्रियम्बदा प्रकाशन, आगरा, संवत् 2028, पृष्ठ 106
3. कबीर ग्रंथावली, डॉ. श्यामसुंदर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2027, पृष्ठ 31
4. कबीर ग्रंथावली, डॉ. श्यामसुंदर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2027, पृष्ठ 65
5. कबीर ग्रंथावली, डॉ. श्यामसुंदर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2027, पृष्ठ 130
6. कबीर ग्रंथावली, चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद, प्रियम्बदा प्रकाशन , आगरा, संवत् 2028, पृष्ठ 38
7. कबीर ग्रंथावली, डॉ. श्यामसुंदर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2027, पृष्ठ 25
8. कबीर, हजारीप्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2014, पृष्ठ 130
9. कबीर ग्रंथावली, चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद, प्रियम्बदा प्रकाशन, आगरा, संवत् 2028, पृष्ठ 10
10. कबीर ग्रंथावली, चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद, प्रियम्बदा प्रकाशन, आगरा, संवत् 2028, पृष्ठ 10
11. http://www.hindisamay.com/Alochana/shukl%20granthavali5/itihas%20shukl2.htm
12. http://gadyakosh.org/gk/
13. कबीर ग्रंथावली, चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद, प्रियम्बदा प्रकाशन, आगरा, संवत् 2028, पृष्ठ 59
14. कबीर ग्रंथावली, चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद, प्रियम्बदा प्रकाशन, आगरा, संवत् 2028, पृष्ठ 50

❑❑

कु. निशा गौतम (शोध छात्रा)
डॉ. जिया हसन (असिस्टेंट प्रोफेसर)
राजनीतिक विज्ञान विभाग, मंगलायतन विश्वविद्यालय, बेसवान
अलीगढ़, यू.पी.

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

भारत में महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व

सारांश—''नास्ति विद्यासमं यक्षुर्नास्ती मातृ समोगुरु'' अर्थात् इस दुनिया में विद्या के समान कोई क्षेत्र नहीं और माता के समान कोई गुरु नहीं है। अगर हम प्राचीनकाल को देखें या उस समय से आज तक के समय को देखें, नारी के प्रति हमारा देश बड़ा ही श्रद्धापूर्ण एवं सम्मानजनक रहा है, परन्तु समय काल से शोषण नारी को नुकसान, क्षति पहुँचाता रहा है, परन्तु स्त्री शिक्षा के महत्व ने ऐसी लड़ाइयों पर विजय पाई है। एक स्त्री को शिक्षित करने का मतलब है एक परिवार को शिक्षित करना। वर्तमान युग को वैचारिकता का युग कहा जा सकता है। अगर स्त्री या माँ अथवा गृहणी के संस्कार, शिक्षा-दीक्षा अच्छी नहीं होगी तो वह समाज व राष्ट्र को श्रेष्ठ सदस्य कैसे दे सकती है? समाज देश, परिवार के लिए स्त्री को स्वस्थ, खुशहाल, शिक्षित, व्यवहार कुशल, बुद्धिमान होना है और वह शिक्षा से ही सम्भव है। जब किसी परिवार, समाज, देश की स्त्री की स्वयं की स्थिति सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक आदि दृष्टिकोण से निम्न होगी तो वह परिवार, समाज, राष्ट्र के विकास में अपना योगदान दे पायेंगी। यह प्रशन अति चिन्ताशील है, एक तो स्त्रियाँ स्वयं राष्ट्र की आधी कम जनसंख्या है एवं दूसरा बच्चे, युवा, प्रौढ़ और वृद्धजन स्त्री पर अपनी पारिवारिक जरूरतों के लिए निर्भर रहते हैं। स्त्री शिक्षा की अवहेलना करना समाज की आने वाली पीढ़ी के साथ अन्याय करना होगा। स्त्री समाज का आधार है, उन्हें शिक्षित करना पूरे समाज को शिक्षित करना है।

यह शोध पत्र भारत में महिला सशक्तिकरण में शिक्षा के महत्व को रेखांकित करने का छोटा-सा प्रयास है।

संकेत शब्द—महिला सशक्तिकरण, वर्तमान युग संस्कार, शिक्षा-दीक्षा, चिन्तनशील, स्त्री शिक्षा, व्यवहार कुशल।

प्रस्तावना—''मुझे सुशिक्षित मातायें दो, मैं एक सुशिक्षित राष्ट्र का निर्माण कर दूँगा'' नेपोलियन ने कहा था। शिक्षा सामाजिक सशक्तिकरण के लिए प्रथम एवं मूलभूत साधन है। यह माना जाता है कि शिक्षा ही वह उपकरण है, जिससे महिला समाज में अपनी समान सशक्त व उपयोगी/महत्वपूर्ण भूमिका की अनुभूति करा सकती है। शिक्षा के आधार पर महिला में दक्षता, कौशल, ज्ञान एवं क्षमताओं का विकास होता है। शिक्षित स्त्री न केवल खुद लाभान्वित होती है, बल्कि उससे भावी पीढ़ी भी लाभान्वित होती है।

शिक्षा किसी भी प्रकार के कौशल, विकास की प्राप्ति व दूर दृष्टिकोण के विकास के लिए पूर्णतया महत्वपूर्ण है। महिला की शिक्षा से उसका शोषण रोकने में मदद मिलेगी, निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है। महिला की वास्तविक स्थिति से व्यक्ति, परिवार, समाज एवं राष्ट्र की सामाजिक, आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है।

शिक्षा किसी भी व्यक्ति के जीवन के दरवाजे की एक महत्वपूर्ण कुँजी मानी जाती है, जिसका लक्ष्य ज्ञान रूपी प्रकाश फैलाना तथा अज्ञानता रूपी अंधेरे को दूर करना है। डॉ. अम्बेडकर जी महिलाओं की उन्नति एवं शिक्षा के प्रबल पक्षधर थे, उनका मानना था कि किसी भी समाज का मूल्यांकन इस बात से किया जाता है कि उसमें महिलाओं की क्या स्थिति है? दुनिया की लगभग आधी आबादी महिलाओं की है, इसलिए जब तक उनका समुचित विकास नहीं होता, कोई भी देश चहुँमुखी विकास नहीं कर सकता, वो महिलाओं एवं बच्चों को शिक्षित करने की बात अपने भाषणों में किया करते थे। उन्होंने शिक्षा के संदर्भ में कहा था ''शिक्षा वह शेरनी का दूध है, जो पियेगा वह दहाड़ेगा'' अर्थात् उनके कहने का अर्थ था कि शिक्षा ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा स्त्री-पुरुष, गरीब-अमीर, छोटा-बड़ा अपने सभी प्रकार के अधिकार प्राप्त कर सकता है और अपनी बुद्धि का प्रयोग कर राष्ट्र, समाज, परिवार व स्वयं को सशक्त बना सकता है, परन्तु इन सब में महिला शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है। किसी भी शिक्षित समाज की वास्तविक स्थिति जानने का तरीका है कि हम यह जानने का प्रयास करें कि समाज में महिलाओं की शैक्षिक स्थिति कैसी है? उनको क्या-क्या अधिकार प्राप्त हुए है और उनकी मूलभूत संसाधनों तक कितनी पहुँच है व राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, निर्णय निर्माण की प्रक्रिया में उनकी कितनी सहभागिता है? देखा जाए तो महिलाओं की शिक्षा विकास का एक महत्वपूर्ण कारक है, जिसने महिलाओं का स्तर और उनकी समाज में भूमिका को उठाने में सहायता की है।

शिक्षा किसी भी व्यक्ति के सुखद जीवन की मजबूत आधारशिला तैयार करती है, शिक्षा के द्वारा महिलाएँ असहाय व अबला से सशक्त और सबल बनती हैं। महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य है महिलाओं में छिपी हुई उन शक्तियों, गुणों तथा प्रतिभाओं को विकसित करना, जिनको व्यवहार में लाकर वे अपने विकास की ओर स्वयं कदम बढ़ा सके। यह कार्य केवल शिक्षा के द्वारा ही संभव है। विश्व विकास रिपोर्ट (1998-99) स्पष्ट करती है कि महिला शिक्षा आर्थिक विकास में सहायक होने के साथ है। प्रजननता को कम करके, बच्चों के उचित पालन-पोषण तथा माता-पिता व बच्चों के बेहतर स्वास्थ्य में सहायक होती है। सामान्य तौर पर शिक्षा आर्थिक आत्मनिर्भरता में सहायक होती है। इससे महिलाओं का सामाजिक स्तर ऊपर उठता है तथा उनका सशक्तिकरण होता है। आर्थिक स्वायत्तता से निर्भरता एवं पुरुष प्रधानता एवं वर्चस्व ध्वस्त होने से न सिर्फ महिला व्यक्तिगत स्तर पर लाभान्वित होगी, अपितु सामाजिक स्तर पर ऐसे परिवर्तन होंगे कि पुरुषप्रधान सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न होकर रह जायेगी और एक नई सामाजिक व्यवस्था उभरकर सामने आयेगी, जिसमें महिला और पुरुष दोनों का समान महत्व होगा।

महिला शिक्षा एवं सशक्तिकरण—किसी भी संतुलित सामाजिक व्यवस्था के लिए विकास के क्षेत्र में स्त्री-पुरुष दोनों की समान भागीदारी आवश्यक है। महिला को शिक्षित करने के पीछे पुरुष

या महिला की श्रेष्ठता साबित करने का लक्ष्य नहीं है, बल्कि उन उपायों को सुनिश्चित करने की पहल करना है, जिससे विकास मानकों की प्राप्ति में महिला एवं पुरुष बराबर योगदान कर सकें। वातावरण लिंग भेद से रहित परस्पर पूरकता का हो, इस दृष्टि से महिला सशक्तिकरण के अनेक ऐसे आयाम हैं, जिन पर प्रेरित और प्रोत्साहित करने में महिला सशक्तिकरण में अच्छे वांछित परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं, जिनमें शैक्षिक सशक्तिकरण महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि एक सुशिक्षित महिला अपने ज्ञान से अपने परिवार को प्रकाशित करने के साथ-साथ आत्मविश्वास से परिपूर्ण होती है। संतान की प्रथम गुरु अर्थात् उसकी माता शिक्षित हो तो भावी पीढ़ी के शिक्षित होने की संभावना कई गुनहा बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त सामाजिक बुराईयों, रूढ़िवादी विचारों को खत्म करने का एकमात्र हथियार शिक्षा भी है, इसके इस्तेमाल से स्त्रियाँ परिवार तथा समाज में सम्मान के साथ-साथ आर्थिक स्वतंत्रता भी प्राप्त कर सकती है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि शिक्षित स्त्री परिवार के महत्वपूर्ण फैसलों में अपनी राय देने के साथ-साथ निर्णय प्रक्रिया में भी भागीदारी कर सकती है। आज यह सकारात्मक परिवर्तन प्रत्येक समाज में देखा जा सकता है। लोग बच्चियों को पढ़ाने में रूचि लेने लगे हैं। आवश्यकता यह है कि उनके युवा होने पर भी रूचि बनी रहे एवं पढ़ाई समाप्त होने पर ही उनके विवाह की चर्चा हो, क्योंकि शिक्षा ही वह माध्यम है, जिससे महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थिति में वर्तमान में सुधार आ रहा है। शिक्षा महिलाओं को पितुसत्तात्मक ज्ञान, नियमों, मूल्यों, व्यवहार पद्धतियों को चुनौती देने में मदद करती है। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए शिक्षा सामूहिक कार्यवाही और चिन्तन की एक अनवरत (बिना रोकटोक) जारी रखने वाली प्रक्रिया है।

वर्तमान में महिला शिक्षा का प्रभाव—स्त्री शिक्षा का असर स्वयं के साथ-साथ समाज व देश पर भी पड़ता है। अहिल्याबाई होलकर, भारत की पहली शिक्षक महिला सावित्री बाई फुले, कल्पना चावला, फातिमा शेख जैसी स्त्रियों का योगदान ही स्त्री शिक्षा के प्रभाव का सर्वोत्तम उदाहरण है, इनके कार्यों के पीछे इनकी शिक्षा का महत्व था। आज शिक्षा के माध्यम से ही महिलाओं में जागरूकता आई है, वे अपने बारे में सोचने लगी हैं, उन्होंने महसूस किया है कि घर से बाहर भी जीवन है। महिलाओं में आत्मविश्वास का विकास हुआ है, उनके व्यक्तित्व में निखार आया है। महिलाएँ न केवल सामान्य शिक्षा विश्वविद्यालय तथा कॉलेजों में ही जा रही हैं, बल्कि मुख्यमंत्री, राज्यपाल, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, वित्त मंत्री, जज तक बन रही हैं। एवरेस्ट पर विजय प्राप्त कर रही हैं। वायु सैनिक एवं नौसेना में भी अपनी सेवा प्रदान कर रही हैं।

प्राचीनकाल से वर्तमान तक महिलाओं ने समाज में महत्वपूर्ण भूमिका ही निभायी है, परन्तु उन्हीं महिलाओं ने जो शिक्षित है, जिन्हें अपने हक-अधिकारों का ज्ञान है। महिला शिक्षित होती है तो वह अपने विकास के साथ-साथ परिवार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, क्योंकि शिक्षित महिला बच्चों का पालन-पोषण ठीक ढंग से कर सकती हैं। अगर परिवार में बुजुर्ग लोग हैं तो वह अपनी सूझबूझ से घरेलू कामों के साथ-साथ उनका ध्यान भी रख सकती है। शिक्षित महिला पारिवारिक बजट अच्छे से चला सकती हैं।

महिला शिक्षा का ही प्रभाव है कि आज घरेलू हिंसा काफी कम हो गयी है, जो अत्याचार पहले महिलाओं पर घरों में किये जाते थे, थोड़ी एवं छोटी-छोटी बातों पर महिलाओं को पीटा जाता था। अब उस घरेलू हिंसा में काफी समय से कमी आई है, क्योंकि महिलाएँ शिक्षित होने के कारण आवाज

उठाती हैं। शिक्षा ने महिलाओं को शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक मजबूत भी बनाया है और स्वयं पर होने वाले अत्याचारों से बचने का मार्ग भी दिखाया है। महिलाएँ आर्थिक रूप से भी मजबूत हो रही हैं। पहले पूर्ण रूप से पुरुषों पर ही निर्भर रहना पड़ता था तो पुरुष उन्हें पैर की जूती समझते थे और जरूरतों को पूर्ण करने के लिए पैसे भी नहीं देते थे, परन्तु आज महिलाएँ घरों से बाहर निकल कर नौकरी करने लगी हैं। शिक्षिकाएँ, पुलिस, जज, वकील आदि तक बन रही हैं, अपने अधिकारों को जान रही हैं। महिलाओं की भी आज आर्थिक स्थिति में बदलाव आ रहा है और वह राष्ट्र के विकास में अपना खूब योगदान दे रही हैं। इस बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि कैसे धीरे-धीरे महिलाएँ हर क्षेत्र में अपना योगदान दे रही है और दूसरी महिलाओं के लिए प्रेरणा का स्त्रोत भी बन रही हैं। पहले लड़कियों की जबरन शादी कर दी जाती थी, उनकी उम्मीदें, इच्छाओं और सपनों को कैद कर दिया जाता था। अगर कोई लड़की शिक्षा ग्रहण करना चाहती थी, शादी नहीं करना चाहती थी तो परिवार के लोग उस पर दबाव डालकर समझा-बुझा कर शादी-विवाह के लिए तैयार कर लेते थे, परन्तु आज ऐसा नहीं है, आज शिक्षा ने महिलाओं को अपने सपने पूरे करने का अधिकार दे दिया है। अब कोई भी लड़की शिक्षा से वंचित नहीं रहेगी और अपनी मंजिल खुद तय करेगी, क्योंकि अन्य महिलाओं को देखकर परिवार वाले भी अपनी सोच में धीरे-धीरे परिवर्तन ला रहे हैं। परिवार समाज को भी महसूस हो गया है। समाज की उन्नति के लिए महिलाओं का शिक्षित होना अत्यंत आवश्यक है। शिक्षित महिलाएँ परिवार का अच्छा पालन-पोषण और बेहतर तरीके से स्वास्थ्य का देखभाल कर सकती है। आज महिलाओं ने यह साबित कर दिया है कि वह पुरुषों से किसी भी मामले में कम नहीं हैं। समाज में बदलाव की संभावना तभी बढ़ती है, जब नारी शिक्षित होती है, फिर भी आज काफी परिवर्तन आया है, जो एक उन्नति का सकारात्मक परिवर्तन माना जा सकता है। देश की उन्नति के लिए जितना पुरुषों का शिक्षित होना आवश्यक है, उतना ही महिलाओं का शिक्षित होना आवश्यक है। अगर पहले ही महिलाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार मिला होता तो देश की उन्नति बहुत पहले हो चुकी होती। पुराने समय में यही सोचा जाता था कि नारी सिर्फ खाना बनाने और बच्चों की देखभाल करने के लिए बनी है, उन्हें शिक्षित करने के बारे में कम ही लोग सोचते थे, परन्तु आज यह महसूस किया जाने लगा है, नारी का शिक्षित होना जरूरी है न केवल स्वयं के लिए बल्कि समाज के लिए भी वह न केवल सुचारू रूप से घर चला सकती है बल्कि नौकरी करके परिवार की देखभाल भी करती है, जिस प्रकार शरीर को भोजन की आवश्यकता है, उसी प्रकार मानसिक विकास के लिए शिक्षा आवश्यक है। अगर नारी ही शिक्षित नहीं होगी तो वह न तो सफल गृहिणी बन सकेगी और न कुशल माता। समाज में बाल-अपराध बढ़ने का कारण बालक का मानसिक रूप से विकसित न होना है। अगर एक माँ ही अशिक्षित होगी तो वह अपने बच्चों का सही मार्गदर्शन करके उनका मानसिक विकास कैसे कर पायेगी और एक स्वस्थ समाज का निर्माण एवं विकास संभव नहीं हो सकेगा। अत: यह कहा जा सकता है कि शिक्षित नारी ही भविष्य में निराशा एवं शोषण के अंधकार से निकलकर परिवार को सही राह दिखा सकती है। भारत के मध्य एवं पुर्नजागरण के दौरान स्त्रियों को पुरुषों से अलग तरह की शिक्षा देने की धारणा विकसित थी। वर्तमान दौर में यह सर्वमान्य है कि स्त्री को भी उतना शिक्षित होना चाहिए जितना कि पुरुषों को। यह सिद्ध सत्य है कि यदि माता शिक्षित नहीं होगी तो देश की सन्तानों का कदापि कल्याण नहीं हो सकता।

महिला शिक्षा हेतु सरकार की योजनाएँ—केन्द्र सरकार ने महिलाओं की शिक्षा और महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए अनेक योजनाएँ शुरू की हैं। इन योजनाओं के क्रियान्वयन से निश्चित ही बालिकाओं, महिलाओं को हौंसला मिल रहा है और महिलाएँ आगे भी बढ़ रही हैं। कुछ प्रमुख योजनाएँ हैं, जो महिलाओं को आगे बढ़ाने में प्रोत्साहित कर रही हैं।

बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ—इसकी शुरूआत वर्ष 2015 में देश में घटते बाल लिंग अनुपात के मुद्दे को संबोधित करने के लिए की गयी थी। यह महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय तथा मानव संसाधन मंत्रालय की संयुक्त पहल है। इसके तहत कन्या भ्रूण हत्या रोकने, स्कूलों में लड़कियों की संख्या बढ़ाने, स्कूल छोड़ने वालों की संख्या को कम करने, शिक्षा के अधिकार के नियमों को लागू करने और लड़कियों के लिए शौचालय के निर्माण में वृद्धि करने जैसे उद्देश्य निर्धारित किये गये थे, जिसका लाभ काफी हुआ और हो भी रहा है। इस योजना के तहत हर लड़की के लिए पैसे बचाने की लघु बचत योजना ''सुकन्या समवृद्धि अकाउण्ट योजना'' शुरू की गयी। बच्चियों को उच्च शिक्षा के लिए आवश्यक होने पर धन की उपलब्धता जैसे छोटे एवं महत्वपूर्ण लक्ष्यों के साथ ही घरेलू बचत का प्रतिशत बढ़ाने के लिए यह पहल की गयी। यह योजना माता-पिता को अपनी लड़की की बेहतर शिक्षा और भविष्य के लिए पैसे बचाने के लिए प्रोत्साहित करती है। इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं अल्पसंख्यक वर्ग की 14 से 18 साल की ऐसी बालिकाओं को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित करना है जो खराब आर्थिक स्थिति के कारण बीच में ही अपनी पढ़ाई छोड़ देती है।

कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना—इस योजना की शुरूआत वर्ष 2004 में विशेष रूप से कम साक्षरता दर वाले क्षेत्रों में लड़कियों के लिए प्राथमिक स्तर की शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए की गयी थी। यह भारत सरकार की ओर से अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग की बालिकाओं के लिए सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में आवासीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना के लिए कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना की शुरूआत पहले दो वर्ष तक अलग योजना के रूप में सर्वशिक्षा अभियान, बालिकाओं के लिए प्राथमिकता स्तर पर शिक्षा दिलाने का राष्ट्रीय कार्यक्रम एवं महिला समवृद्धि योजना के साथ सामंजस्य बिठाते हुए शरू की गयी थी। बाद में इसे सर्वशिक्षा अभियान में एक अलग घटक के रूप में मिला दिया गया।

महिला समाख्या योजना—इस योजना की शुरूआत वर्ष 1989 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के लक्ष्यों के अनुसार महिलाओं की शिक्षा में सुधार व उन्हें सशक्त करने हेतु की गयी थी। यूनिसेफ भी देश में लड़कियों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने में भारत सरकार के साथ मिलकर काम करता है।

इन सब के अलावा महिलाओं को सशक्त करने को राज्य भी पहल कर रहे हैं, जिससे कि समाज में बदलाव साफ देखा जा रहा है। महिलाएँ अब आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक क्षेत्र में खूब आगे बढ़ रही हैं। लोकतांत्रिक शासन प्रणाली शासन का श्रेष्ठतम रूप है, इसका सार जनता की सहभागिता एवं नियंत्रण में निहित है। यह महिला एवं पुरुष दोनों की उन्नति तथा उत्थान के समान अवसर प्रदान करती है। प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन के बाद भारतीय समाज में बदलाव आया और महिला

शिक्षा पर भी बल मिला। सरकार का बुनियादी दृष्टिकोण सामाजिक क्षेत्र में कल्याणकारी नीतियों के तहत महिलाओं को लक्ष्य बनाने का रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर वर्तमान तक की योजनाओं में महिलाओं के आर्थिक व सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने तथा उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा में शामिल करने के लिए अलग से आर्थिक सहायता का प्रावधान भी किया गया। 20वीं सदी में राष्ट्रीय महिला परिषद तथा अखिल भारतीय महिला संघ जैसी अनेक संस्थाओं का जन्म हुआ, जिन्होंने महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक क्षेत्र में बढ़ने को प्रोत्साहित किया। इन सरकार की योजनाओं का असर साफ दिखाई दे रहा है। महिलाएँ अब स्वयं के अधिकारों के बारे में जागरूक होने लगी है। समाज में अपने अधिकारों के लिए बिना डरे हुए आवाज उठाने लगी है, यह शिक्षा द्वारा ही संभव हो पा रहा है। शिक्षा का प्रभाव गांव-शहर की महिलाओं पर खूब देखा जा सकता है, महिलाएँ परिवार में निर्णय भी लेने में सक्षम हो रही हैं और अपने ऊपर होने वाले घरेलू अपराध के खिलाफ भी आवाज उठा रही हैं, क्योंकि शिक्षा ही अमूक को मूक बना सकती है। सरकार द्वारा किये गये प्रयासों का असर खूब देखा जा सकता है। समाज में आज महिलाएँ हर क्षेत्र में कामकाज करती देखी जा सकती हैं, परन्तु इन सभी प्रोत्साहन योजनाओं के बाद भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं की साक्षरता दर कम ही है। वर्ष 2011 की जनगणना के हिसाब से भारत की वर्तमान महिला साक्षरता दर पुरुष साक्षरता दर से पीछे है। पूर्व में 65.5 प्रतिशत और बाद में 81.3 प्रतिशत है। 65.6 प्रतिशत पर भारत की महिला शिक्षा दर विश्व औसत 79.7 प्रतिशत से काफी कम है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति काफी गम्भीर है, जहाँ लड़कों की तुलना में लड़कियाँ कम ही शिक्षा ग्रहण करती हैं। उनके घरवाले उन्हें स्कूल कम ही भेजते हैं। आधा भारत गांव में निवास करता है व वहाँ जनसंख्या भी अधिक होती है। अगर लड़कियों को सभी स्कूल भेजें, सरकार के साथ-साथ माता-पिता भी बालिका की शिक्षा पर बल दें तो स्त्री भी पुरुषों के समान पूर्ण शिक्षित बन सकती है। अगर स्त्री शिक्षित होगी तो वह परिवार, समाज, राष्ट्र में अच्छे कार्यों को करके परिवार, राष्ट्र एवं समाज को नया मोड़ दे सकती है। स्वयं महिलाओं को अपने अधिकारों को जानना होगा और यह शिक्षा द्वारा ही संभव है।

शोध पद्धति—प्रस्तुत शोध पत्र भारत में महिला सशक्तिकरण में शिक्षा के महत्व को दर्शाता है। इस शोध पत्र के माध्य से यह बताने का प्रयास किया गया है कि महिला शिक्षा का राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है, यह सब जानने के लिए अन्वेषणात्मक व विवेचनात्मक शोध प्रारूप का प्रयोग किया गया है। द्वितीय स्त्रोतों को माध्यम से शोध पत्र को पूर्ण किया गया है।

निष्कर्ष—समाज, राष्ट्र में महिलाओं का स्थान पुरुषों के समान ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि आज महिला अबला नारी के रूप में सुदृढ़ होकर पुरुष से कदम से कदम मिलाने को प्रयासरत है। जैसे-जैसे महिलाओं का शिक्षा की ओर रूझान बढ़ा है अर्थात वे शिक्षित हुई हैं, वैसे-वैसे वे सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में भी सुदृढ़ हुई हैं तथा आत्मनिर्भर बनी हैं। महिला के शिक्षित हुए बिना हम देश के उज्जवल भविष्य की कल्पना भी नहीं कर सकते। परिवार, समाज एवं देश की उन्नति में महिलाओं की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। भारत के लोकतंत्र को सफल बनाने का एकमात्र रास्ता यही है। महिलाओं तथा पुरुषों की शिक्षा हासिल करने के लिए बराबरी का हक दिया जाये, क्योंकि महिला एवं पुरुष दोनों रथ के पहिये के समान हैं। यदि एक निर्बल एवं घटिया हुआ तो समाज का

रथ निर्विघ्न आगे नहीं बढ़ सकता। अत: कह सकते हैं कि महिलाओं को न समझे बेकार जीवन का है ये आधार।

संदर्भ

1. देवपुरा प्रतापभल, मार्च 2005 'महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व' कुरूक्षेत्र अंक 5
2. तिवारी आर.पी. (1998), भारतीय नारी : 'वर्तमान समस्या एवं समाधान' नई दिल्ली।
3. मकोल नीलम, शर्मा संदीप, सितम्बर (2006) सामाजिक विकास में शिक्षित महिलाओं का योगदान, कुरूक्षेत्र
4. जे सी अग्रवाल (1 जनवरी 2009) भारत में नारी शिक्षा, प्रभाव प्रकाशन, आई.एस.बी.एन. 978-81-85828-77-0
5. E.W. Hulter (1859) अभिगमन तिथि 20 जुलाई 2016 Female Education : its importance, The Helps and the Hindrances : Address Delivered Before the aculty and student of the susquehahna Female College, at 5 elins grove

   ब. सुमन कृष्णकांत (1 सितम्बर 2001) 21वीं सदी की ओर, राजकमल प्रकाशन
7. 2003, Female Education : A study of rural India. Cosmo Publications.
8. डॉ. जे.पी. सिंह (1 अप्रैल 2016) आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन PHI Learning Pvt. Ltd.
9. विकिपीडिया, नेट, दैनिक जागरण सम्पादकीय पेज
10. महिला सशक्तिकरण : एक संवाद
11. www.rayassembly.inc.in/loksabha.htm
12. जैन, प्रतिभा (1998), ''भारतीय स्त्री : सांस्कृतिक संदर्भ, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
13. अंसारी एम.ए. (2001) ''महिला और मानवाधिकार'' ज्योति प्रकाशन, जयपुर।
14. मिश्रा के.के. (1965), ''विकास का समाज शास्त्र'' वैशाली प्रकाशन, गोरखपुर।
15. शर्मा प्रज्ञा (2011) ''वुमन इन इंडिया सोसाइटी'' जयपुर, प्वाइण्टर पब्लिशर्स, पेज 162, 165

❑❑

डॉ. ज्योति कौर (एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग)
श्री गुरु गोबिन्द सिंह कॉलेज ऑफ कॉमर्स
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
दीपा (सहायक प्राध्यापक, हिंदी)
शहीद जगदीश प्रसाद पुरोहित राजकीय महाविद्यालय
नन्दानगर घाट, चमोली, उत्तराखण्ड

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

सूफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी : नागमती का विरह वर्णन

भक्ति साहित्य की निर्गुण काव्यधारा में प्रेममार्गी काव्य परंपरा का आरंभ हो चुका था। इस परंपरा में प्रेमकथानक काव्य एवं सूफी काव्यों की रचना परिलक्षित होती है। इन काव्यग्रंथों में प्रेम तत्त्व की प्रमुखता है किंतु प्रेम-तत्त्व परंपरागत भारतीय श्रृंगार-भावना से थोड़ा भिन्न है। जहाँ सामान्यत: श्रृंगार रसात्मक काव्यों से विवाह, दांपत्य एवं सामाजिक जीवन की मर्यादाओं को स्वीकार करके चलने वाले गार्हस्थिक प्रेम का निरूपण होता रहा है, वहीं इनमें शुद्ध स्वच्छंदतापूर्ण दृष्टिकोण, सौंदर्य-भावना, साहसपूर्ण क्रियाकलाप एवं समाज-विमुख प्रणय-भावना का चित्रण हुआ है। इसीलिए इस विशिष्टता को प्रारंभ में फारसी प्रभाव या सूफी प्रभाव की देन के रूप में स्वीकार करते हुए इस प्रेमपद्धति को अभारतीय घोषित कर दिया गया। किंतु स्वयं आचार्य शुक्ल ने 'पद्मावत' की प्रेमपद्धति को अभारतीय मान लेने के कारण रत्नसेन-पद्मावती के प्रेम को आत्मा-परमात्मा का प्रेम बताते हुए उसे सूफी रहस्यवाद से अनुप्राणित सिद्ध करने की चेष्टा की है।

पद्मावत का केन्द्रीय कथ्य प्रेम तत्व की अभिव्यक्ति है। इस प्रेम तत्व का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार सूफी दर्शन या 'तसव्वुफ' में खोजा जा सकता है क्योंकि सूफी संत पारंपरिक इस्लाम की तरह खुदा और बंदे में स्वामी-दास का नहीं, बल्कि प्रेम का संबंध स्वीकारते हैं उनकी मान्यता है कि ईश्वर की प्राप्ति नफस(इन्द्रियों) या बुद्धि से नहीं बल्कि कल्ब (हृदय) के माध्यम से होती है और रूढ़ में पहुँचकर समाप्त होती है। इस साधाना का उद्देश्य 'अन - अल - हक' अर्थात् खुदा से एकत्व की उपलब्धि है। 'इश्क मजाज़ी' से ' इश्क हकीकी' की प्रक्रिया के दौरान चतुर्थ और अंतिम अवस्था 'हकीकत' की उपलब्धि ही साधक का परम उद्देश्य है जहाँ बंदा खुदा से फना होकर 'बका' की प्राप्ति करता है।

'पद्मावत' कवितत्व एवं भावव्यंजना की दृष्टि से अत्यंत उच्चकोटि का काव्य है। पद्मावती के सौंदर्य, नागमती के विरह, रत्नसेन के साहस, त्याग एवं शौर्य की व्यंजना इसमें अत्यंत प्रभावोत्पादक शैली में हुई है। भारतीय कथा काव्य की प्राय:सभी रूढ़ियों एवं प्रवृत्तियों का नियोजन सफलतापूर्वक हुआ है। काव्य की शैली में सर्वत्र प्रौढ़ता एवं गंभीरता परिलक्षित होती है। प्रतीकात्मक या रूपकत्व के कारण इसमें व्यंग्यप्रधान ध्वनि का प्रादुर्भाव सहज ही हो गया है। इसकी भाषा अवधी है तथा छंद - योजना में नियमित रूप में चौपाई व दोहे का प्रयोग हुआ है। भक्तिकालीन आख्यानों में विभिन्न शास्त्रों के ज्ञान को गुंफित करने की भी प्रवृत्ति रही है। 'पद्मावत' में यह अपने चरमोत्कर्ष रूप में दृष्टिगोचर होती है। भारतीय दर्शन, ज्योतिष, कामशास्त्र, पाकशास्त्र, बागवनी, शास्त्रविद्या आदि के

परंपरागत ज्ञान का गुंफन इसमें चेष्टा पूर्वक किया गया है, जिससे कहीं-कहीं अनावश्यक विस्तार एवं अरूचिकर इतिवृत्तात्कमता का दोष भी इसमें आ गया है। फिर भी समग्र रूप में यह अत्यंत उच्चकोटि का प्रबंधकाव्य है, जिसकी तुलना में 'रामचरितमानस' और 'कामायनी' जैसे कुछ काव्य ही रखे जा सकते हैं।

पद्मावत में श्रृंगार का वियोग पक्ष तीन चरित्रों के माध्यम से दिखाया गया है—रत्नसेन, पद्मावती तथा नागमती। रत्नसेन का वियोग दो स्थानों पर दिखता है—पहली बार पद्मावती का वर्णन सुनकर वह मूर्च्छित हो जाता है और दूसरी बार पद्मावती के दर्शन करते ही पुनः मूर्च्छित हो जाता है तथा होश में आने पर उसे न पाकर वियोग का अनुभव करता है। पद्मावती का वियोग भी दो स्थानों पर है। पहला बिंदु पूर्वराग का ही है जब वह रत्नसेन के सिहंलद्वीप पहुँचने पर योग के प्रभाव से विरह का अनुभव करने लगती है। दूसरा प्रसंग वह है जब अलाउद्दीन द्वारा रत्नसेन को नजरबंद कर लिये जाने पर पद्मावती वियोग का अनुभव करती है।

इन दोनों के अतिरिक्त जायसी ने नागमती के विरह का भी विस्तृत वर्णन किया जो बेहद रमणीय, सुंदर व मार्मिक है। नागमती रत्नसेन की पत्नी है जो रत्नसेन के पद्मावती की खोज में सिहंलद्वीप जाने पर एक वर्ष तक पति से अलग रहने के कारण विरह वेदना भोगती है। सच यह है कि जायसी का भावुक मन नागमती के वियोग में ही अधिक रमा है। इस वियोग वर्णन में उन्होंने कुछ ऐसे तत्वों का समावेश किया है कि यह वर्णन हिंदी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ विरह वर्णन के रूप में स्वीकृत हो गया है। इस संबंध में शुक्ल जी की स्पष्ट धारणा है कि 'नागमती का विरह वर्णन हिंदी साहित्य में एक अद्वितीय वस्तु है।'

नागमती के विरह वर्णन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह मानी गयी है कि इसमें नागमती को रानी के रूप में नहीं, एक साधारण विरहदग्ध नारी के रूप में वर्णित किया गया है। शुक्ल जी कहते हैं—अपनी भावकुता का बड़ा वृहद परिचय जायसी ने इस बात में दिया है कि रानी नागमती विरहदशा में अपना रानीपन बिल्कुल भूल जाती है और अपने को केवल साधारण नारी के रूप में देखती है। इसी सामान्य स्वाभाविक वृत्ति के बल पर उसके विरह वाक्य छोटे-बड़े सबके हृदय को समान रूप में स्पर्श करते हैं। स्पष्ट है कि नागमती के विरह में साधारणीकरण की जो अद्‌भुत क्षमता विद्यमान है, वह मूलतः इसलिए है कि नागमती के विरह में प्रयुक्त प्रतीक एवं उपमान अगर महलों की भीतरी दुनिया के होते तो इन उपमानों एवं प्रतीकों का संबंध आम आदमी से नहीं होता, तब उसका विरह भी एक विशिष्ट कौतूहलपूर्ण उदाहरण बनकर रह जाता। रानी नागमती ऐसी बातों से परेशान है जो महलों में रहने वालों को नहीं, साधारण लोगों को परेशान करती है—

जेठ जरै जग बहै लुवारा। उठे बवंडर धिकै पहारा।
चारिहु पवन झकौरै आगि। लंका दाहि पलंका लागी।
उठै आगि औ आवै आंधी। नैन न सूझ, मरौं दुःख बांधी॥

नागमती के विरह में एक बहुत बड़ी विशेषता है—आत्म विस्तार। इस दृष्टि से हिंदी साहित्य में ऐसा दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। यह स्वाभाविक-सी बात है कि जब व्यक्ति वियोग में होता है तो अन्य व्यक्तियों को अपना दुःख बताना चाहता है और दुःख दूर करने में उनकी सहायता भी चाहता

है। भावुकता अधिक होने पर विरही व्यक्ति प्रकृति से भी दुखी होने की उम्मीद करता है, जैसे सूर की गोपियाँ कहती हैं—मधुबन तुम कत रहत हरे! ठीक वैसा ही अनुभव रामचरितमानस में भी होता है जब सीता के अपहरण के बाद वियोग की दशा में राम वन पशु-पक्षियों से पूछते हैं—हे खग, मृग, हे मधुकर स्रेनी। तुम देखी सीता मृगनैनी! ऐसी अवस्था नागमती की भी है। जो नागमती कभी बड़े-बड़े राजाओं पर भी ध्यान नहीं देती थी, वही अब पक्षियों से अपनी हृदय वेदना कह रही है—

पिउ सों कहेउ संदेसड़ा, हे भौरा हे काग।
सो धनि विरहे जरि मुई, तेहिक धुआँ हमहिं लाग।

नागमती के विरह वर्णन की एक और प्रमुख विशेषता यह है कि उसका विरह केवल वैयक्तिक संयोग सुख की प्रेरणा पर आधारित नहीं बल्कि जीवन के लोक-व्यवहारों तथा कर्त्तव्यों से जुड़ा हुआ है। नागमती मध्यकाल की एक हिंदू नारी है जिसके जीवन की सारी सार्थकता उसके पति में केन्द्रित है। नागमती के विरह में दोहरा दुःख है। एक तो यह कि पति नहीं है, दूसरा यह कि पति एक और नारी की खोज में गया है। इन सारे तनावों के बीच नागमती विरह को गार्हस्थिक रूप देती है उसे भोग से नहीं जीवन की सार्थकता से जोड़ती है। इस दृष्टि से यह विरह भक्ति की ऊँचाई प्राप्त कर लेता है। चौमासे में स्वामी के घर में न रहने से क्या दशा होती है इसका वर्णन नागमती ने इन शब्दों मे किया है—

पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह मंदिर को छावा।

शुक्ल जी कहते हैं—''जायसी ने स्त्री जाति की या कम से कम हिंदू गृहिणी मात्र की सामान्य स्थिति के भीतर विप्रलंभ श्रृंगार के अत्यंत समुज्ज्वल रूप का विकास दिखाया है .... यह आशिक माशूकों का निर्लज्ज प्रलाप नहीं है, यह हिंदू गृहिणी की विरह वाणी है। इसका सात्विक मर्यादापूर्ण माधुर्य परम मनोहर है।''

नागमती के वियोग ने इस गार्हस्थिक चेतना में अद्‌भुत मार्मिकता का समावेश कर दिया है। नागमती यह अच्छी तरह समझती है कि मध्यकाल में पुरुष पति से उस सात्विकता की अपेक्षा नहीं की जा सकती जो पुरुष एवं नारी को समान स्तर पर देखती हो। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि उसे जितना अपने पति का सहारा मिल सके मिल जाए। वह पक्षी से कहती है—

पद्मावती सों कहेहु विहंगम। कंत लोभाइ रही करि संगम॥
तोहि चैन सुख मिलै सरीरा। मो कहँ दिए दुंद दुख पूरा॥

नागमती का वियोग अपनी प्रतिबद्धता में भी अनूठा है अपने पति के दायित्वहीन व्यवहार के बावजूद वह अपने प्रेम में पूरी तरह दृढ़ है। उसकी अंतिम इच्छा यही है कि प्रिय से संगम न हो तो भी कम से कम इतना अवश्य हो जाए कि मेरे जलने के बाद पवन मेरी राख को उड़ाकर उस रास्ते पर बिछा दे जहाँ से मेरे पति आने वाले हैं। इस बिंदु पर स्पष्ट होता है कि उसके जीवन की संपूर्ण सार्थकता पति को कष्टों से बचाने में है। वैयक्तिक भोग की उसे लेशमात्र भी इच्छा नहीं है। वह कहती है—

यह तन जारौं छार कै, कहौ कि पवन उड़ाय।
मंकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरे जहँ पाँय॥

विरह वर्णन में फारसी मसनवियों की शैली प्राय: ऊहात्मक हो जाती है। ऊहात्मकता का अर्थ है—विरह का ऐसा अतिश्योक्तिपूर्ण वर्णन जो असामान्य होने के साथ-साथ कहीं-कहीं कुरुचिपूर्ण या जुगुप्सा पूर्ण होने लगे। नागमती के विरह वर्णन में जायसी ने ऊहात्मकता का सहारा तो लिया है किंतु उसे कहीं भी मजाक का विषय नहीं बनने दिया है। ऐसे वर्णनों में भी नागमती की व्यथा सुनकर हृदय द्रवीभूत होता है, हँसी नहीं आती—

दहि कोयला भइ कंत सनेहा। तोला माँसु रहा नहिं देहा।
रकत न रहा, विरह तन जरा। रती-रती होइ नैनन्ह ढरा॥

शुक्ल जी का ऊहात्मकता के संबंध में कहना है—''जायसी का विरह वर्णन कहीं-कहीं अत्युक्तिपूर्ण होने पर भी मजाक की हद तक नहीं पहुँचने पाया है, उसमें गांभीर्य बना हुआ है। उनकी अत्युक्तियाँ बात की करामात नहीं जान पड़ती, हृदय की अत्यन्त तीव्र वेदना के शब्द संकेत प्रतीत होती है।''

स्पष्ट है कि श्रृंगार के वियोग पक्ष का वर्णन जायसी अपेक्षाकृत अधिक मार्मिकता, रमणीयता के साथ करने में सफल हुए हैं। यदि आधुनिक दृष्टिकोण से देखें तो आचार्य शुक्ल के निष्कर्षों से सहमत होना कठिन प्रतीत होता है। यह बात सही है कि नागमती का विरह हिंदू पतिव्रता नारी का गार्हस्थिक विरह है न कि देह की भूख या वासना की आकुलता से उत्पन्न होने वाला विरह। फिर भी इस विरह में मध्यकालीन नारी की दासता तथा विषम परिस्थितियों का सूक्ष्म चित्रण भी दिखाई देता है।

कुल मिलाकर, यह मानने में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि अपनी अद्‌भुत साधारणीकरण क्षमता, अपनी व्यापकता तथा प्रेम की पवित्रता आदि तत्वों के कारण नागमती का विरह वर्णन हिंदी साहित्य में सचमुच एक अद्वितीय वस्तु है।

संदर्भ

1. जायसी ग्रंथावली, रामचन्द्र शुक्ल, नवीन संस्करण 2001, वाणी प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
2. हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, नवीन संस्करण 2008, अशोक प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली,110006
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास,डॉ बच्चन सिंह, संशोधित परिवर्द्धित संस्करण 2006, राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

❑❑

डॉ. विमल कुमार लहरी
असि. प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

आधुनिक भारत में दिव्यांगों की प्रमुख चुनौतियाँ : समाजशास्त्रीय पाठ

सारांश—भारत में विकलांगों को 2019 में एक नया नाम 'दिव्यांग' दिया गया। यह शब्द उनकी सामाजिक प्रस्थिति को मजबूत करता है। वैश्विक पटल पर तुलनात्मक दृष्टिकोण से दृष्टिगत है कि आधुनिक भारत में दिव्यांगों की मौलिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं हुई हैं। उत्तरआधुनिकता के पायदान पर भी उन्हें विविध चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। वैसे इनकी चुनौतियों के समाधान हेतु सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों द्वारा ढेर सारे प्रयास किये जा रहे हैं, लेकिन जनसंख्या एवं समय तथा काल के सापेक्ष अभी और सहयोग की आवश्यकता है। भारत का शीर्ष नेतृत्व भी दिव्यांगों को समाज की मुख्यधारा में लाने हेतु प्रतिबद्ध एवं क्रियाशील दृष्टिगोचर है।

प्रमुख शब्दावली—दिव्यांग, वैश्विक पटल, उत्तरआधुनिकता, गैर-सरकारी संगठन, प्रतिबद्ध, क्रियाशील, सापेक्ष, प्रस्थिति, नेतृत्व।

परिचय एवं सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य

मानव सभ्यता की यात्रा में दिव्यांग जीवन काफी जटिल एवं चुनौतीपूर्ण रहा है। आज उत्तर आधुनिकता के पायदान पर दिव्यांगजन के लिए ढेर सारे प्रयास किये जा रहे हैं, फिर भी अन्य देशों की तुलना में भारत का दिव्यांग अभी भी पूरी तरह से मुख्यधारा में जुड़ नहीं पाया है और ना ही आवश्यकता से जुड़े आधुनिक संसाधनों की पूर्ति हो पायी है। दिव्यांग शब्द अभी हाल ही में भारत सरकार द्वारा प्रदान किया गया शब्द है। इससे पूर्व विकलांग शब्द दिव्यांग के स्थान पर प्रयोग किया जाता था। विकलांग अथवा दिव्यांग शब्द उनके लिए प्रयोग किया जाता है, जो शारीरिक अथवा मानसिक रूप से अन्य की अपेक्षा अक्षम होते हैं। भारत के शीर्ष नेतृत्व द्वारा 'मन की बात' में 'विकलांग' शब्द के स्थान पर 'दिव्यांग शब्द के प्रयोग हेतु आग्रह किया गया था। विश्व स्वास्थ्य के अनुसार दुनियां की 15 प्रतिशत आबादी किसी न किसी रूप में विकलांगता से पीड़ित है। यदि हम भारत की बात करें तो यहाँ की कुल आबादी का 2.21 प्रतिशत आबादी विकलांगता से प्रभावित है। आज भारत में 'नि:शक्त व्यक्ति अधिकार विधेयक 2014' के अनुसार दिव्यांगों की कुल 7 श्रेणियाँ हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार हम देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर है कि इस समय भारत में कुल विकलांगों की संख्या 2.68 करोड़ है।

दिव्यांगों की समस्या एवं उनके साथ भेदभाव एक वैश्विक समस्या है। आज भी उन्हें उपेक्षा और घृणा के मिश्रित दयाभाव के साथ ही देखा जाता है। लेकि इतिहास के आइने में झाँकें तो ऐसे

ढेर सारे दिव्यांग रहे हैं जिन्होंने अपनी बौद्धिक क्षमता का लोहा मनवाया, लेकिन आज शिक्षा, रोजगार एवं अन्य सुविधाओं के अभाव में दिव्यांगों को ढेर सारी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

अवधारणात्मक विश्लेषण

विकलांगता मानव की ऐसी शारीरिक एवं मानसिक अक्षमता है जिसके कारण व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों की तरह किसी कार्य को करने में अक्षम होता है। सामान्य शब्दों में विकलांगता के संदर्भ में यह भी कहा जाता है कि एक व्यक्ति जिसमें कोई शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक दोष होता है, जो उसे दिन-प्रतिदिन की क्रियाओं में भाग लेने रोकती है। ऐसे व्यक्ति को हम दिव्यांग कह सकते हैं।

पुस्तक समीक्षा

1. **विश्व स्वास्थ्य संगठन (2014)** ने स्वास्थ्य की दशाओं पर सर्वाधिक प्रतिक्रिया एशिया के महाद्वीप में भारत एवं पाकिस्तान के संदर्भ में व्यक्त किया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन नवीन नीति के स्थान पर क्रियान्वित नीति को स्वीकार करने पर बल देता है। वह दिव्यांगों के प्रति परिवर्तित 'कार्य संस्कृति' को सफल बनाने की चुनौती को स्वीकार करने पर बल देता है।
2. **विनोद कुमार मिश्र** की पुस्तक '**विकलांग विभूतियों की जीवनगाथाएँ**'[1] दुनिया में अब तक के विकलांग विभूतियों में जैसे वैदिक ऋचा रचनाकार, वेदांतशास्त्री, महाकवि, उपन्यासकार, साहित्यकार, लेखक, चित्रकार, संगीतकार, नृत्यांगना, आविष्कारक, वैज्ञानिक योद्धा के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान बनाने वाले विकलांग विभूतियों का तथ्यपरक विश्लेषण प्रस्तुत करती है।
3. रीता पेशावरिया, डी. के. मेनन, राहुल गांगुली, सुमित राय, राजम, पी. आर. एस. पील्ले, आशा गुप्ता, एवं आर. के. होरा (1993-94) की पुस्तक 'मूविंग फॉरवर्ड'[2] पुस्तक मंदबुद्धि बच्चों के अभिभावकों के लिए एक शिक्षाप्रद संदर्शिका हैं। यह पुस्तक 1993-94 के बीच आरंभ की गयी बहुकेंद्रीय परियोजना 'परिवारों को सशक्त बनाऐ' के परिणाम एवं सिकंदराबाद, भोपाल, तिरुवंतपुरम और दिल्ली के मानसिक मंद बच्चों के 140 परिवारों से साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों के आधार पर तैयार की गयी हैं।
4. **पॉलिसिज एंड स्कीम ऑफ सेन्ट्रल एंड स्टेट गवर्नमेन्ट फॉर पिपुल विथ डिसेबल्ड चाइल्ड (2012)** के अन्तर्गत सर्वाधिक प्रभावी पक्ष शिक्षा को माना है, किन्तु इस शिक्षा को वह प्रशिक्षण से स्वीकार नहीं करता है, बल्कि प्रारम्भिक शिक्षा को ही प्रभावी शिक्षा मान लेता है।
5. **विनोद कुमार मिश्र (2003)** की 'पुस्तक विकलांगों के लिए रोजगार'[3] विभिन्न क्षेत्रों में विकलांगों के रोजगार की संभावनाओं को प्रदर्शित करती है। विदेशों में विकलांगों के लिए किए गए रोजगार के प्रयास, विकलांगों के लिए रोजगार परक प्रशिक्षण एवं शिक्षित और उच्च शिक्षित विकलांगों के लिए उपयुक्त रोजगार के साथ अल्प शिक्षित और अशिक्षित विकलांगों के लिए भी रोजगार के अवसर की बात पुस्तक करती है।

6. उषा ग्रोवर एवं रवि प्रकाश सिंह की पुस्तक **'बौद्धिक अक्षमता - निर्देश पुस्तिका'**[4] कुल 19 भागों में विभक्त करके पूर्ण की गई है। जिसमें विकलांगता को लेकर विभिन्न बीमारियाँ, बौद्धिक अक्षमता की प्रकृति के साथ विशेष शिक्षा के इतिहास को भी रखा गया हैं। यह पुस्तक विकलांगता के शीघ्र पहचान एवं उसके आकलन पर भी हस्तक्षेप करती है।

उद्देश्य

1. शिक्षा से जुड़ी चुनौतियों का अध्ययन करना।
2. स्वास्थ्य, चिकित्सा एवं सुरक्षा से जुड़े पक्षों का अध्ययन करना।
3. दिव्यांगों के दैनिक जीवन में संचार एवं यातायात से जुड़ी चुनौतियों का अध्ययन करना।
4. समावेश के प्रति दिव्यांगों के सामाजीकरण का अध्ययन करना।

शोध के प्रश्न

प्रस्तुत शोध-आलेख को अधोलिखित शोध प्रश्नों पर परिसीमित किया गया है—

1. क्या दिव्यांगों की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक भागीदारी अभी भी प्रश्न चिन्ह बना है?
2. क्या दिव्यांगों को दैनिक जीवन के क्रिया-कलापों में कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है?
3. क्या दिव्यांगों के बीच स्वास्थ्य चिकित्सा, यातायात एवं संचार साधनों के साथ-साथ उपेक्षा एवं तिरस्कार की समस्या एवं सुरक्षा की समस्या बड़े स्तर पर विद्यमान हैं?

शोध-प्रारूप

भारत की जनगणना वर्ष 2011 के अनुसार उत्तरप्रदेश मे विभिन्न दिव्यांगताओं से ग्रसित कुल व्यक्तियों की संख्या 4157514 है। प्रस्तुत शोध आलेख को पूर्ण करने के लिए वाराणसी जनपद से कुल 20 दिव्यांगों का चयन किया गया है। इन्हीं चयनित दिव्यांगों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत शोध-आलेख को पूर्ण किया गया है। शोध-आलेख की प्रकृति वर्णानात्मक है। इसमें साक्षात्कार विधि के माध्यम से तथ्यों का चयन किया गया है।

सारणीयन, विश्लेषण, परिणाम, समापन-अवलोकन एवं प्रतिवेदन

चयनित उत्तरदाताओं से साक्षात्कार के उपरान्त जो तथ्य प्राप्त हुए उसके आधार पर विश्लेषण, उसके परिणाम एवं प्रतिवेदन को अधोलिखित बिन्दुओं पर प्रस्तुत किया गया है=

सामाजिक भागीदारी का प्रश्न

इस धरा पर देखा जाय तो लोकजन के बीच सामाजिक भागीदारी को लेकर संस्तरण की वैचारिकी का प्रभाव बड़े स्तर पर रहा है जिसके कारण जनसंख्या का एक बड़ा भाग हाशिए पर रहा है। इस हाशिए के समाज में दिव्यांगों को भी देखा जा सकता है। विविध स्तरों पर अक्षमता के कारण उन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया है। कालान्तर में इस तरह की वैचारिकी में थोड़ा बदलाव जरूर आया है, लेकिन दुनियाँ में आज भी हम देखें तो दिव्यांगों की सामाजिक भागीदारी पूरी तरह से

सुनिश्चित नहीं हो पायी है। अस्तु, इसी पक्ष का तथ्यपरक विश्लेषण अधोलिखित सारणी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है—

तालिका संख्या : 1

सामाजिक भागीदारी की सुनिश्चितता	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	02	10.00
नहीं	17	85.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि 85 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि आज उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी दिव्यांगों की सामाजिक भागीदारी सभी स्तरों पर सुनिश्चित नहीं हो पायी है, जबकि 10 प्रतिशत इस संदर्भ में सामाजिक भागीदारी की सुनिश्चितता को स्वीकार किया। शेष 5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस संदर्भ में कोई उत्तर नहीं दिया।

इस तथ्य से यह अवधारणा निर्मित होती है कि आज उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी दिव्यांगों की सामाजिक भागीदारी सभी स्तरों पर पूरी तरह से सुनिश्चित नहीं हो पायी है।

आर्थिक भागीदारी में कठिनाई

उत्तर आधुनिकता के पायदान पर आर्थिक भागीदारी के अभाव में सम्पूर्ण विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। लेकिन आज शारीरिक, मानसिक एवं अन्य स्तरों पर अक्षम दिव्यांगजनों की आर्थिक भागीदारी भी पूरी तरह से सुनिश्चित नहीं हो पायी है। वैश्विक पटल पर मानव सभ्यता के बीच दिव्यांगों के लिए यह एक बड़ी चुनौती है। अस्तु, इसी पक्ष का विश्लेषण निम्नलिखित सारणी में किया गया है—

तालिका संख्या : 2

आर्थिक भागीदारी में कठिनाई	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	16	80.00
नहीं	03	15.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि 80 प्रतिशत दिव्यांगों ने स्वीकार किया है कि आज उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी दिव्यांगों को विभिन्न स्तरों पर आर्थिक भागीदारी में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जबकि 15 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया। शेष 5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस संदर्भ में कोई उत्तर नहीं दिया।

इस तथ्य से यह अवधारणा निर्मित होती है कि आर्थिक भागीदारी को लेकर दिव्यांगों को विविध स्तरों पर कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी चुनौतियाँ

मानव का सांस्कृतिक जीवन उसकी वास्तविक पूंजी होती है। उसके सम्पूर्ण विकास में सांस्कृतिक पक्ष बड़े स्तर पर सहायक होते हैं। दिव्यांगों की सांस्कृतिक भागीदारी को हम देखें तो वे काफी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। शारीरिक एवं मानसिक स्तरों पर अक्षम होने तथा आधुनिक संसाधनों की अनुपलब्धता के कारण दिव्यांगों की सांस्कृतिक भागीदारी पर प्रश्न चिन्ह है। अस्तु, इसी पक्ष की पुष्टि अधोलिखित सारणी करती है—

तालिका संख्या : 3

सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी चुनौतियों का सामना	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	15	75.00
नहीं	04	20.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका में 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है। आज दिव्यांगों को सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस संदर्भ में नकारात्मक उत्तर दिया। शेष 5 प्रतिशत उत्तरदाता अनुत्तरित रहे।

इस तथ्य के आधार निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दिव्यांग आज भी सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।

शैक्षणिक भागीदारी में कठिनाई

शिक्षा एक ऐसा सशक्त माध्यम है जो व्यक्ति के समाजीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। दुनियां में हम देखें तो शिक्षा की सम्पूर्ण भागीदारी को लेकर बड़े स्तर पर विमर्श जारी है। दिव्यांगों के शिक्षा के संदर्भ में हम देखें तो भारत ही नहीं, वरन् वैश्विक स्तर पर दिव्यांगों की शैक्षणिक भागीदारी अद्यतन पूरी तरह से सुनिश्चित नहीं हो पायी है। अस्तु, इसी पक्ष का तथ्यपरक प्रदर्शन अधोलिखित सारणी करती है—

तालिका संख्या : 4

शैक्षिक भागीदारी में कठिनाई	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	15	75.00
नहीं	01	05.00
अनुत्तर	04	20.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि 75 प्रतिशत दिव्यांगों ने स्वीकार किया है कि दिव्यांगों को शैक्षिक भागीदारी में कठिनाई का सामना करना पड़ा है, जबकि 05 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कठिनाई को स्वीकार नहीं किया। शेष 20 प्रतिशत उत्तरदाता अनुत्तरित रहे।

इस तथ्य के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दिव्यांगों को शिक्षा उपार्जन में विविध स्तरों पर कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। इन्हीं कठिनाईयों के कारण दिव्यांग या तो पढ़ नहीं पाते हैं या पढ़ पाते हैं तो उच्च शिक्षा में इनकी भागीदारी बहुत कम है।

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा व्यवस्था से जुड़ी चुनौतियाँ

अच्छा स्वास्थ्य मानव की अमूल्य निधि होती है। मानव स्वास्थ्य का व्याधिकीय पक्ष उसके दैनिक क्रिया-कलाप को प्रभावित करते हैं। भारत में आज हम देखें तो आम लोकजन तक अभी भी पूरी तरह से चिकित्सा व्यवस्था आधुनिक संसाधनों से युक्त नहीं हो पाया है। एक स्वस्थ व्यक्ति को व्याधिकीय ग्रस्त होने पर उसे ढेर सारी चुनौतियाों का सामना करना पड़ता है, तो जरा सोचे कि एक अक्षम व्यक्ति को व्याधिकीय अवस्था में कितनी बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता होगा? अस्तु, इस संदर्भ में साक्षात्कार से जो तथ्य उभरकर सामने आये, उसका विश्लेषण इस प्रकार है—

तालिका संख्या : 5

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा से जुड़ी चुनौतियाँ	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	12	60.00
नहीं	07	35.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका में 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि दिव्यांगों को स्वास्थ्य एवं चिकित्सा से जुड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ा है, जबकि 35 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस संदर्भ में नकारात्मक उत्तर दिया। शेष 05 प्रतिशत उत्तरदाता अनुत्तरित रहे।

इस तथ्य के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि सुविधा सम्पन्न दिव्यांगों के अतिरिक्त अन्य दिव्यांगों को स्वास्थ्य एवं चिकित्सा से जुड़ी चुनौतियों का सामना आज भी करना पड़ता है।

यातायात एवं संचार के साधनों से जुड़ी चुनौतियाँ

भारत में हम देखें तो आज भी ऐसे ढेर सारे ग्रामीण एवं दूर-दराज के क्षेत्र हैं, जहाँ यातायात के संसाधनों का अभाव है। संचार से जुड़े संसाधनों की उपलब्धता भी पूरी तरह से सुनिश्चित नहीं है। ऐसी स्थिति में आम लोकजन के साथ-साथ दिव्यांगों को काफी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अस्तु, इसी पक्ष का तथ्यपरक विश्लेषण अधोलिखित सारणी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है—

तालिका संख्या : 6

संचार एवं यातायात की समस्यायें	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	16	80.00
नहीं	03	15.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को दृष्टिगत करें तो 80 प्रतिशत दिव्यांगों ने स्वीकार किया है कि दिव्यांगों को संचार एवं यातायात की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। 15 प्रतिशत उत्तरदाता इस संदर्भ में नकारात्मक उत्तरदाता दिया। शेष 5 प्रतिशत उत्तरदाता अनुत्तरित रहे।

इस तथ्य के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दिव्यांग समाज संचार एवं यातायात की चुनौतियों का सामना कर रहा है।

बच्चों के लालन-पालन की चुनौती

भारत ही नहीं वरन् दुनियां में हम देखें तो दिव्यांगों की एक प्रमुख चुनौती उनके बच्चों के लालन-पालन की दृष्टिगोचर होती है। वर्तमान समय में भारत में कुल दिव्यांगों की संख्या 2.68 करोड़ हैं, जबकि इसमें से अधिकांश दिव्यांग परिवार के साथ जीवन को गति दे रहे हैं। अर्थात् इनके कंधों पर इनके बच्चों के लालन-पालन एवं समाजीकरण की प्रमुख जिम्मेदारी है। अस्तु, इसी पक्ष का तथ्यपरक विश्लेषण अधोलिखित सारणी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है—

तालिका संख्या : 7

बच्चों के लालन पालन की चुनौती	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	81	90.00
नहीं	01	05.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि 90 प्रतिशत दिव्यांगों ने स्वीकार किया है कि जिन दिव्यांगों को छोटे बच्चे होते हैं, उन्हें बड़े स्तर पर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

इस तथ्य के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दिव्यांग समाज बच्चों के लालन-पालन को लेकर विभिन्न स्तरों पर चुनौतियों का सामना कर रहा है।

उपेक्षा एवं तिरस्कार की चुनौती

'उपेक्षा' एक ऐसा शब्द है, जो जीवन के ऐसे संदर्श को प्रस्तुत करता है, जहाँ मानव, मानव के ही बीच एक दूसरे को लेकर भेद की वैचारिकी से पोषित होता है। भारतीय धर्मग्रन्थों एवं इतिहास का अवलोकन करें, तो कुछ ऐसे धर्मग्रन्थ में अथवा इतिहास में युद्ध एवं संघर्ष के दृष्टान्त मिलते हैं, जिनकी यात्रा उपेक्षा के कारण ही प्रारम्भ होती है और उसमें खासतौर से दिव्यांगों को ही लेकर बातें आगे बढ़ी हैं। वास्तव में दिव्यांगता को लेकर मानव, और मानव के बीच भेद एवं संस्तरण की वैचारिकी हजारों-हजारों वर्षों की यात्रा के बाद आज उत्तरआधुनिकता के पायदान पर भी देखी जा सकती है। अस्तु, इसी पक्ष का तथ्यपरक विश्लेषण अधोलिखित सारणी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है—

तालिका संख्या : 8

उपेक्षा एवं तिरस्कार की चुनौती	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	14	70.00
नहीं	05	25.00
अनुत्तर	01	05.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि 70 प्रतिशत दिव्यांगों को उत्तर आधुनिकता के पायदान पर भी उपेक्षा एवं तिरस्कार का सामना करना पड़ता है। 25 प्रतिशत उत्तरदाता उपेक्षा एवं तिरस्कार को स्वीकार नहीं किया। शेष 5 प्रतिशत उत्तरदाता अनुत्तरित रहे।

इस तथ्य के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आज उत्तर आधुनिकता के पायदान पर दिव्यांगों को उपेक्षा एवं तिरस्कार से जुड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

सुरक्षा की समस्या

आज सुरक्षा की समस्या दुनिया के लोकजन के सामने एक बड़ी समस्या है। बच्चे, बूढ़े, महिलायें एवं दिव्यांगजनों के बीच यह समस्या बड़े स्तर पर दृष्टिगोचर होती है। सुरक्षा को ही लेकर दुनिया में हम अपार्टमेंट संस्कृति को देखते हैं। सुरक्षा की समस्या के समाधान हेतु सरकारी संगठनों द्वारा ढेर सारे प्रयास किये जा रहे हैं, लेकिन दिव्यांगों की सुरक्षा को लेकर अभी और बड़े प्रयास की आवश्यकता है।

तालिका संख्या : 9

उपेक्षा एवं तिरस्कार की चुनौती	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	20	100.00
नहीं	00	00.00
अनुत्तर	00	00.00
योग	20	100.00

उपर्युक्त तालिका को देखें तो स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि सभी उत्तरदाता सुरक्षा से जुड़ी चुनौतियों को स्वीकार कर रहे हैं। इस तथ्य के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि दिव्यांग समाज आज भी सुरक्षा को लेकर बहुत सशक्त नहीं हैं।

समापन-अवलोकन एवं प्रतिवेदन

प्रस्तुत शोध-पत्र आधुनिकता के पायदान पर दिव्यांगों की प्रमुख चुनौतियों को प्रस्तुत करता है। जहाँ हम पाते हैं कि भारतीय समाज ही नहीं वरन् वैश्विक स्तर पर हमारी सभ्यता काफी आगे के पायदान पर कदम रख चुकी है, लेकिन दिव्यांगों को लेकर हमारी वैचारिकी अभी भी शायद बहुत ही निचले पायदान पर है। दिव्यांगों को आज भी दया के पात्र के रूप में समझा जा रहा है। उपेक्षा

के तीरों से मुक्ति दिव्यांगों को आज भी नहीं मिल पायी है। विविध स्तर पर उनकी भागीदारी पूरी तरह से सुनिश्चित दृष्टिगोचर नहीं होती है। वहीं हम देखें तो ऐसे दिव्यांग जिनके कंधों पर उनके परिवार की जिम्मेदारी है, उनका जीवन बहुत चुनौती भरा है। संचार एवं आधुनिक संसाधनों ने उनके जीवन को थोड़ा सरल जरूर बनाया है, लेकिन व्यावहारिक धरातल पर समाज की मुख्यधारा में पूरी तरह से खड़ा करने हेतु अभी और बड़े प्रयासों की आवश्यकता है। इनके लिए शिक्षा एवं रोजगार के दरवाजे बड़े स्तर पर खोलने होंगे। साथ ही दिव्यांगों को लेकर लोकजन को अपने दृष्टिकोण बदलने होंगे। सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों को इस दिशा में कुछ नई नीतियों का निर्माण एवं उसे क्रियान्वयन करना होगा।

इस शोध आलेख का समापन अवलोकन भारतेन्दु मिश्रा[5] की कविता 'उजले साथी' के कुछ अंश से किया जा रहा है—

इनसे दोस्ती करो
तो सच्चे मन से करना
ये बन सकते हैं
तुम्हारी अजीबोगरीब दुनिया के उजले साथी
ये भर सकते हैं
तुम्हारी बदसूरत ज़िन्दगी में
संगीत के हजारों रंग।

संदर्भ

1. मिश्र, विनोद कुमार (2003), विकलांगों के लिए रोजगार, भारती प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली।
2. पेशावरिया, रीता एवं डी. के. मेनन, राहुल गांगुली, सुमित राय, राजम, पी. आर. एस. पील्ले, आशा गुप्ता, आर. के. होरा (1993-94), मूविंग फॉरवर्ड राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, आंध्र प्रदेश।
3. मिश्र, विनोद कुमार (2003), विकलांग विभूतियों की जीवनगाथाएँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. ग्रोवर, उषा एवं रवि प्रकाश सिंह (2014), बौद्धिक अक्षमता—निर्देश पुस्तिका, विशेष शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, तेलंगाना, भारत।
5. http://www.kavitakosh.org/ /kk/ उजले साथी/भारतेन्दु मिश्र

❑❑

विपिन तेवतिया
शोधार्थी
अध्यापक शिक्षा विभाग
डी.ए.वी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर, उ.प्र.

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता

शोध पत्र सार—महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता महिलाओं को स्वतंत्र बनाने की परिपाटी को संदर्भित करती है, ताकि वे बिना किसी पारिवारिक या सामाजिक प्रतिबंध के अपने जीवन का संरक्षण करें और अपने निर्णय स्वयं ले सकें, मुख्य रूप से यह महिलाओं को अपने व्यक्तिगत विकास की जिम्मेदारी लेने का अधिकार देता है। समाज में महिलाएं हमेशा से उत्पीड़ित रहीं हैं, इन्हें घरों तक सीमित कर दिया गया एवं बुनियादी शिक्षा प्राप्त करने से रोक दिया जाता है। इसलिए महिला सशक्तिकरण का मुख्य उद्देश्य पुरुषों के साथ समान रूप से खड़े होने में उनकी मदद करना है। महिला सशक्तिकरण परिवार के साथ-साथ देश के समृद्ध विकास को सुनिश्चित करने के लिए एक मूलभूत गतिक्रम है। महिलाओं को सशक्त बनाने से, विश्व व्यवस्था निश्चित रूप से लैंगिक समानता का साक्षी बनेगी और समाज के प्रत्येक स्तर की महिलाएं अपने आप को सबल करने में सहायक होंगीं। प्रस्तुत शोध पत्र में महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता का अध्ययन किया गया है।

मूलशब्द—सशक्तिकरण, समानता, शिक्षा, परिवर्तन, जागरूकता, विकास।

प्रस्तावना—प्रकृति एक जीवित शक्ति है, यह स्त्री और पुरुष दोनों से बनी है। लेकिन पुरुषों को परिवार का सबसे शक्तिशाली सदस्य माना जाता है, वे परिवार के निर्णय लेने वाले हैं और जीवनयापन करने के उत्तरदायी हैं, दूसरी ओर महिलाओं को घर के सभी कामों और बच्चों के पालन-पोषण के लिए जिम्मेदार माना जाता है, वे कोई भी महत्वपूर्ण पारिवारिक निर्णय लेने में संलग्न नहीं है। यही वजह है कि महिलाओं को शिक्षा और समानता जैसे बुनियादी मानवाधिकारों से लगातार वंचित किया गया एवं समाज में लिंग के आधार पर भूमिकाएँ सौंपी गईं। महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता महिलाओं के हाथों में सत्ता सौंपने की एक प्रगतिशील तकनीक है, जिससे समाज में उनका एक खुशहाल और सम्मानजनक अस्तित्व हो, जब उनके पास विभिन्न अवसरों तक पहुँच होगी तभी वे अपना सशक्तिकरण कर सकेंगी। प्रत्येक देश के समग्र विकास के लिए महिला सशक्तिकरण सबसे आवश्यक क्षेत्र है, पहले घर में केवल पुरुष कमाने वाले थे, माना एक परिवार में, एक कमाने वाला पुरुष है—दूसरे परिवार में पुरुष और महिला दोनों कमाने वाले सदस्य हैं, जीवन का बेहतर तरीका किसके पास होगा? उत्तर सरल है—वह परिवार जिसमें पुरुष और महिला दोनों कमाने वाले हैं, नतीजतन जब लैंगिक समानता को प्राथमिकता दी जायेगी तो देश की विकास दर तेज हो जायेगी। समानता के लिए खड़े होकर महिलाओं ने अन्य महिलाओं के लिए दृढ़ आवाज उठाई है। लैंगिक

समानता की धारणा ने पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता की मांग को और सशक्त किया है, भारत जैसे देश के लिए महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता देश की वृद्धि और विकास में एक बड़ी भूमिका की ओर संदर्भित करती हैं।

शोध का औचित्य—प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता का अध्ययन किया है, यह शोध महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता की उपयोगिता को ज्ञात करके महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता को और अधिक प्रभावशाली बनाने में सहायक होगा एवं शिक्षार्थियों को नवीन विचारों को धारण करने के लिए प्रेरित करेगा।

प्रस्तुत शोध पत्र के उद्देश्य

1. महिला सशक्तिकरण का विश्लेषनात्मक अध्ययन करना।
2. लैंगिक समानता का विश्लेषनात्मक अध्ययन करना।

शोध विधि—प्रस्तुत शोध विश्लेषनात्मक एवं वर्णात्मक विधि पर आधारित है इस शोध में पूर्णत: द्वितीय आंकडों का प्रयोग किया गया है, इसमें विभिन्न शोध पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं, लेखों एवं पुस्तकों का सन्दर्भ लेते हुए, वर्णात्मक व्याख्या एवं निष्कर्ष निकाले गये हैं।

व्याख्या—प्रस्तुत शोध का विश्लेषनात्मक अध्ययन करने के उपरान्त शोधार्थी ने महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता की वर्णात्मक व्याख्या की है।

महिला सशक्तिकरण

प्राचीन भारत में महिलाएँ सशक्त थीं एवं लैंगिक असमानता भी व्याप्त नहीं थीं। भारत की प्राचीन सिंधु घाटी सभ्यता में देवी मां की पूजा के प्रमाण मिलते हैं। वैदिक काल में महिलाओं की सम्मानजनक स्थिति थी, दहेज एवं तलाक प्रथा नहीं थी, महिलाएं शिक्षित थीं एवं उनको विशेष अधिकार प्राप्त थे, पिता की संपत्ति पर बेटियों के उत्तराधिकार के अधिकार को मान्यता थी, विधवा को फिर से शादी करने का अधिकार था। वैदिक काल के बाद महिलाओं की स्थिति में ह्रास होता चला गया, इसमें मुस्लिम काल ऐसा रहा, जिसमें सबसे ज्यादा महिला असमानता व्याप्त हुई। वर्तमान परिदृश्य के आधार पर महिला सशक्तिकरण को पांच श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है—सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक।

1. सामाजिक आधार पर महिला सशक्तिकरण—महिलाओं की सामाजिक संबंधों की स्थिति को बदलने के लिए व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से कार्य करने की क्षमता एवं उन संस्थाओं और संभाषण को संदर्भित करता है, जो उन्हें सशक्त करते हैं। सामाजिक सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण पहलू प्रचलित सामाजिक मानदंडों और भूमिकाओं को संबोधित करना है, ताकि सामाजिक क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी की स्थिति में सुधार किया जा सके। समुदायों को शामिल करके, हमें सामाजिक और सांस्कृतिक मानदंडों के विस्तार की आवश्यकता हैं, अर्थात महिलाएं अपने घर और घर के बाहर सामाजिक गतिविधियों में भाग ले सकें, बिना किसी सामाजिक मानदंडों द्वारा प्रतिबंधित किए। सशक्तिकरण महिलाओं को एक मजबूत सामाजिक आधार प्रदान करता है और उन्हें सामाजिक

निर्णय लेने के लिए स्वतंत्रता देता है जो उनके स्वयं के लिए और साथ ही साथ उनके परिवारों को भी बढ़ावा देगा। महिलाओं के प्रजनन, स्वास्थ्य और अधिकारों में सुधार के लिए सामाजिक सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण कारक है, यह विवाह और गर्भावस्था जैसी प्रक्रियाओं में आवाज उठाने की उनकी क्षमता को बढ़ाता है। महिलाओं को यह सुनिश्चित करने में भी सक्षम बनाता है कि स्वास्थ्य सेवाएं और स्वच्छता उनकी जरूरतों को पूरा करती हैं, क्योंकि महिलाओं की जरूरतें पुरुषों से अलग होती हैं, इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि उनकी घरेलू और सामाजिक संबंध में भागीदारी सुनिश्चित हो, जिससे महिलाओं में सामाजिक अधिकारों को प्रयोग करने और अपने सामाजिक सशक्तिकरण को प्राप्त करने की क्षमता में वृद्धि हो सके।

2. शैक्षिक आधार पर महिला सशक्तिकरण—शिक्षा महिला सशक्तिकरण का सबसे बड़ा साधन है, यह एक ऐसा कारक भी है, जो देश के समग्र विकास में मदद करता है। शिक्षा महिलाओं के जीवन में बदलाव लाती है, जैसा कि एक कथन बार-बार उद्धृत किया जाता है—''यदि आप एक पुरुष को शिक्षित करते हैं, तो आप एक व्यक्ति को शिक्षित करते हैं, हालांकि यदि आप एक महिला को शिक्षित करते हैं, तो आप पूरे परिवार को शिक्षित करते हैं।'' शैक्षिक आधार पर महिला सशक्तिकरण का अर्थ है—''सशक्त भारत माता''। एक शिक्षित महिला अपने आसपास की अन्य महिलाओं की शिक्षा को बढ़ावा देगी, उनका मार्गदर्शन करेगी और अपने बच्चों के लिए एक बेहतर मार्गदर्शक भी होगी। शिक्षा महिलाओं में आत्मविश्वास एवं सम्मान की क्षमता प्राप्त करने में मदद करती है। शिक्षा शिशु मृत्यु दर को कम करने में भी सहायक है, क्योंकि एक शिक्षित महिला स्वास्थ्य देखभाल एवं शिशु कल्याण की जागरूकता से अवगत होती है। महिलाओं को शिक्षित करने से पूरे परिवार को लाभ होगा और साथ ही साथ समाज का भी विकास होगा। शिक्षित महिलाएं निश्चित रूप से उच्च स्थान प्राप्त कर सकती हैं और अपनी आजीविका का स्वयं निर्माण कर सकती हैं। भारत के ग्रामीण इलाकों में आज भी महिलाओं को उनके शिक्षा के अधिकार से वंचित किया जा रहा है, सरकार ने महिलाओं की शिक्षा के बारे में जागरूकता के लिए विभिन्न योजनाएं शुरू की हैं जैसे—सर्वशिक्षा अभियान, ऑपरेशन ब्लैक-बोर्ड, बेटी बचाओ बेटी पढाओ। शिक्षा महिलाओं को सही और गलत की पहचान करने, उचित दृष्टिकोण का विकास करने और विषम परिस्थितियों को संभालने में मदद करती है। अन्य देशों की तुलना में भारतीय महिलाओं की साक्षरता दर कम है। शिक्षा सभी का मौलिक अधिकार है, किसी को भी शिक्षा के अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। शिक्षा जीवन की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक है।

3. आर्थिक आधार पर महिला सशक्तिकरण—महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण, विशेष रूप से नौकरियों को प्रभावित करने वाले तेजी से तकनीकी और डिजिटल परिवर्तनों के साथ तालमेल रखने के लिए महिलाओं की आय-सृजन के अवसरों और औपचारिक श्रम बाजार में भागीदारी के लिए महत्वपूर्ण हैं। विश्व की विकासशील एवं विकसित अर्थव्यवस्थाओं ने महिलाओं के हितों को सदैव प्रभावित किया है। विश्व स्तर पर 2.7 बिलियन से अधिक महिलाओं को कानूनी रूप से पुरुषों के समान नौकरी चुनने से प्रतिबंधित किया गया है। 2018 में मूल्यांकन की गई 189 अर्थव्यवस्थाओं में से 104 अर्थव्यवस्थाओं में अभी भी महिलाओं को विशिष्ट नौकरियों में काम करने से रोकने वाले कानून हैं, 59 अर्थव्यवस्थाओं में कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न पर कोई कानून नहीं है, और 18

अर्थव्यवस्थाओं में, पति कानूनी रूप से अपनी पत्नियों को काम करने से रोक सकते हैं, लेकिन यदि हम महिलाओं के लिए आय और आर्थिक अवसरों में वृद्धि करते हैं, तो पूरे समुदायों, अर्थव्यवस्थाओं और देशों को लाभ होगा, महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण से उत्पादकता में वृद्धि होगी, आर्थिक विविधीकरण और आय समानता में वृद्धि होगी, साथ ही अन्य सकारात्मक विकास के परिणाम भी प्राप्त होंगे। आर्थिक समानता को आगे बढ़ाना मानवाधिकार, न्याय और निष्पक्षता का मामला है। यह एक रणनीतिक अनिवार्यता भी है जो गरीबी को कम करती है, आर्थिक विकास को बढ़ावा देती है और रोजगार के परिणामों में सुधार करती है। महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में निवेश, एक समृद्ध देशों का निर्माण करता है, क्योंकि एक महिला में निवेश उसके समुदाय और उसके देश में निवेश है। नवोन्मेषी प्रोग्रामिंग के माध्यम से महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए लंबे समय से विभिन्न देश प्रतिबद्ध है।

4. राजनीतिक आधार पर महिला सशक्तिकरण—लोकतंत्र की अवधारणा मूलरूप से, यह संदर्भित करती है कि लोग राजनीतिक संस्थानों पर नियंत्रण कैसे करते हैं। महिला राजनीतिक सशक्तिकरण और अधिकारिता परस्पर जुड़े हुए हैं, महिलाएं सत्ता रखने वालों से अपनी राजनीतिक समानता की मांग के लिए आवश्यक संसाधन और क्षमता प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहीं हैं। यह महिला राजनीतिक सशक्तिकरण का एक एकीकृत दृष्टिकोण है, राजनीतिक सशक्तिकरण के साथ-साथ राज्य के महिला अधिकारिता सशक्तिकरण के परिवर्तित संबंधों मे समरूपता के आधार की भी आवश्यकता है। यह महिलाओं की राजनीतिक क्षमता को बढ़ाता है। अंतर्निहित तर्क यह है कि राजनीतिक सशक्तिकरण ही अधिकारिता की अनुमति देता है। यह समावेशी राजनीतिक संस्थानों के विकास का भी समर्थन करता है, जिसके माध्यम से महिलाओं के हितों का सार्थक प्रतिनिधित्व किया जा सकता है। महिलाओं को सशक्त बनाने और उन्हें अपने स्वयं के विकास पर अधिक स्वतंत्रता देने के लिए जवाबदेह और उत्तरदायी सरकारी संस्थानों के स्वावलंबन की आवश्यकता है, जो महिलाओं की जरूरतों को पूरा कर सकें, आमतौर पर यह तर्क दिया जाता है कि नीति-निर्माण प्रक्रिया को प्रभावित करने के लिए महिलाओं का समर्थन करना उन नीतियों के विकास के लिए महत्वपूर्ण है जो महिलाओं की जरूरतों और हितों को दर्शाती हैं। राजनीतिक भागीदारी को बढ़ावा देना राज्य की जवाबदेही में सुधार और महिलाओं को सशक्त बनाने का एक महत्वपूर्ण तरीका है। इसमें लोकतांत्रिक रूप से महिलाओं को सबल करने, राज्य और महिलाओं के बीच जुड़ाव को बढ़ावा देने और महिलाओं के संघों को मजबूत करने सहित कई दृष्टिकोण शामिल हैं। विकेंद्रीकरण, नागरिक समाज की सक्रियता, नीतियों की पारदर्शिता इत्यादि महिला राजनीतिक सशक्तिकरण को प्रबल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

5. मनोवैज्ञानिक आधार पर महिला सशक्तिकरण—महिलाओं को मनोवैज्ञानिक रूप से सशक्त बनाना हमारे लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। महिलाओं को हमेशा ऐसे रूप में देखा गया कि वह पुरुषों के सामने अक्षम हैं, इसलिए हमारा कर्तव्य बन जाता है कि हम महिलाओं को स्वयं यह एहसास कराएं कि वे बहुत अधिक सामर्थ्यवान हैं, निस्संदेह ऐसी कोई इन-रूम कक्षाएं नहीं हैं जो महिलाओं को उनके वास्तविक सामर्थ्य का एहसास करा सकें, लेकिन हम महिलाओं को उचित बाहरी समर्थन प्रदान कर सकते हैं, इससे उनके आत्मसम्मान में वृद्धि होगी, वह खुद पर विश्वास करना शुरू

कर देंगी, साथ ही साथ महिलाओं को उन कार्यक्रमों, चर्चाओं और सत्रों में भाग लेने के लिए सुनिश्चित करने के लिए उचित कदम उठाए जाएं, जो इस बात को महत्व देतें हैं कि महिलाएं किसी भी समाज का एक सशक्त आधार हैं, इतना ही नहीं, बल्कि स्वयं सहायता समूह महिलाओं को उनकी असुरक्षा और कमजोरियों से मुक्त होने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, महिलाओं को समाज में बदलाव लाने के सबसे प्रभावशाली रूप में देखा जाता है, इसलिए महिलाओं को मनोवैज्ञानिक रूप से सशक्त बनाने के लिए ध्यान दिया जाना चाहिए। मनोवैज्ञानिक रूप से सशक्त महिलाएं अन्य क्षेत्रों में भी आत्मविश्वासी होती हैं, उनका खुद पर विश्वास असंख्यक संभावनाओं के द्वार खोल सकता है, महिलाएं इस बात से अवगत होती हैं कि उनकी स्थिति के बारे में क्या अवांछनीय है, वे बेहतर स्थिति में कैसे हो सकती हैं और उनकी पहुँच में क्या है, अत: मनोवैज्ञानिक आधार पर महिला सशक्तिकरण के व्यक्तिगत और समूह स्तरों पर जीवन को प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में जागरूकता और समझ में वृद्धि की नितांत आवश्यकता है।

लैंगिक समानता का विश्लेषनात्मक अध्ययन

लैंगिक असमानताएं प्रत्येक समाज में अपनी गहरी जड़ें जमा चुकीं हैं। लैंगिक समानता विश्व स्तर पर प्रमुख चिंता का विषय है, यह एक मानवीय अधिकार है, लेकिन हमारी दुनिया महिलाओं और पुरुषों के लिए अवसरों और निर्णय लेने की शक्ति तक पहुंच में लगातार अंतर का सामना कर रही है। विश्व स्तर पर सबसे बड़े लिंग अंतर की पहचान मुख्य रूप से मध्य-पूर्व अफ्रीका और दक्षिण एशिया में की जाती है, महिलाएं दुनिया की आबादी का 50% से अधिक हिस्सा हैं, लेकिन उनके पास दुनिया की संपत्ति का केवल 1% हिस्सा है। विश्व के विभिन्न स्थानों पर, महिलाओं के पास अभी भी जमीन के मालिक होने या संपत्ति के वारिस होने, ऋण प्राप्त करने, आय अर्जित करने या अपने कार्यस्थल में नौकरी के भेदभाव से मुक्त होने के अधिकार नहीं हैं। हम पुरुष प्रधान समाज में रहते हैं जहां एक पुरुष को वह सब करने का पूरा अधिकार है, जो वह चाहता है, हालांकि महिलाओं को यह अधिकार नहीं हैं। महिलाओं को घर और सार्वजनिक क्षेत्र सहित सभी स्तरों पर कम प्रतिनिधित्व दिया जाता है, राजनीतिक अथवा वित्तीय दृष्टिकोण तो बहुत पीछे हैं। महिलाओं के लिए अभी भी रोजगार के अनेकों पद खुले नहीं हैं, फिल्म उद्योग, खेल और सामान्य नौकरियों में वेतन अंतर है, दुनिया भर की विधायिकाओं में महिलाओं की संख्या न्यूनतम है, हालांकि किसी भी देश ने पूरी तरह से लैंगिक समानता प्राप्त नहीं की है। स्कैंडिनेवियाई देश आइसलैंड, नॉर्वे, फिनलैंड और स्वीडन जैसे लिंग अंतर को समाप्त करने की दिशा में अपनी प्रगति में दुनिया का नेतृत्व कर रहें हैं। इन देशों में पुरुषों और महिलाओं के लिए आय, संसाधन और अवसरों की उपलब्धता का अपेक्षाकृत समान वितरण है, लैंगिक समानता दोनों लिंगों को शिक्षा और संसाधनों के समान अवसर प्रदान करने से शुरू होती है। बालिकाओं को शिक्षा में प्राथमिकता दी जाए, क्योंकि एक शिक्षित महिला अपने और अपने आसपास के लोगों के लिए बेहतर जीवन का निर्माण करने में सक्षम होती है, यह राष्ट्रीय विकास के लिए अति आवश्यक है। अल्बर्ट आइंस्टीन के अनुसार ''जो महिला भीड़ का अनुसरण करती है, वह आमतौर पर भीड़ से आगे नहीं जा सकती, जो महिला अकेले चलती है, वह खुद को उन जगहों पर पाती है, जो पहले किसी ने प्राप्त नहीं की थी, आइए हम मदद के लिए हाथ बनें और महिलाओं को यह तय करने दें कि वे भीड़ में शामिल होना चाहती हैं या अकेले चलना चाहती हैं।'' लैंगिक

समानता सुनिश्चित करती है कि प्रत्येक महिला को शिक्षा प्राप्त करने, पेशेवर प्रशिक्षण प्राप्त करने और जागरूक होने के अवसर मिलें, हालांकि लिंग गुणवत्ता सुनिश्चित करेगी कि संसाधनों तक पहुंच दोनों लिंगों को समान रूप से प्रदान की जाए और समान भागीदारी सुनिश्चित की जाए, यहां तक कि पेशेवर स्तर पर भी महिलाओं को लैंगिक असमानता का सामना करना पड़ता है, क्योंकि एक पुरुष उम्मीदवार को महिला उम्मीदवार से अधिक अवसर प्राप्त हैं। लैंगिक समानता सतत विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है और सभी के लिए बुनियादी मानवीय अधिकार सुनिश्चित करती है।

उपसंहार—सशक्तिकरण वहीं होता है, जहाँ अशक्तता होती है, महिला सशक्तिकरण का अभिप्राय है कि महिलाएं पर्याप्त शक्तिशाली नहीं हैं—उन्हें सशक्त बनाने की आवश्यकता है। यह सत्य लंबे समय से अस्तित्व में है, समाज ने दुनिया भर में महिलाओं की स्वतंत्रता का दमन किया, महिलाएं अपने घरों में कैद थीं। भारत में महिलाओं को दूसरों की प्राथमिकताओं के आधार पर खुद को ढालना सिखाया जाता है और पुरुषों को नेतृत्व करना, क्योंकि महिलाओं को घर के कामों का प्रबंधन करना पड़ता है जबकि पुरुष परिवार को वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। यह मुस्लिमकाल से चली आ रही रूढ़िवादिता है और इसका एक कारण महिलाओं को समाज में बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित करना है। हाल के वर्षों में महिलाओं को तुच्छता और शक्तिहीनता के रसातल से बाहर निकालने के लिए उल्लेखनीय काम शुरू हुआ है। महिलाएं जन्मजात नेतृत्व होता हैं, अगर उन्हें मौका दिया जाए तो वे हर क्षेत्र में आगे बढ़ सकती हैं, जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन्होंने महसूस किया कि उनके जीवन का अर्थ केवल घर में सेवा करने से कहीं अधिक है, धीरे-धीरे महिलाओं ने मानव निर्मित बाधाओं को पार करना शुरू किया तभी से दुनिया ने महिलाओं के उदय को देखना शुरू कर दिया। पुरुषों के विपरीत, महिलाएं कभी भी अपने विपरीत लिंग की आवाज को दबाने की कोशिश नहीं करती हैं। वे सभी दबे-कुचले लोगों का साथ देतीं हैं, क्योंकि वे जीवन को बेहतर बनाने की कोशिश करती हैं। आज पहले से कहीं अधिक महिलाएं स्वतंत्रता का आनंद ले रही हैं, वे स्वयं निर्णय ले सकती हैं, हालांकि अभी लंबा रास्ता तय करना है। महिलाओं को अपने दमन के लिए धर्म के इस्तेमाल का विरोध करना होगा एवं उन सभी अन्यायों को दूर करने के लिए आगे आना होगा, जिनका वे मुस्लिमकाल से सामना कर रही हैं।

संदर्भ

Energia (2007). Where Energy is Women's Business: National and Regional Reports from Africa, Asia, Latin America and the Pacific.

Johnsson-Latham, G. (2007). A Study on Gender Equality as a Prerequisite for Sustainable Development, Report to the Environment Advisory Council, Sweden.

United Nations Development Program (UNDP) (2007). Human Development Report.

United Nations Environment Program (UNEP) (2004). Women and the Environment.

Women and Work Commission (WWC) (2006). Shaping a Fairer Future, United Kingdom.

ओश्ब्रायन, जोड़ी (2009). अखिल भारतीय महिला सम्मेलन, लिंग और समाज का विश्वकोश, थाउजेंड ओक्स, सीए : सेज पब्लिकेशंस।

ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट (2012). स्विटजरलैंड : वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम।

गोएट्ज़, ऐनी मैरी (2009). साहसी महिला : लोकतंत्रीकरण और शासन सुधार के संदर्भ में महिलाओं की राजनीतिक प्रभावशीलता, न्यूयॉर्क : रूटलेज।

विजयलक्ष्मी, वी (2005). भारत में महिला और नागरिक समाज सक्रियतावाद, सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन संस्थान।

सेन, समिता (2000). एक नारीवादी राजनीति की ओर? ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भारतीय महिला आंदोलन, लिंग और विकास पर नीति अनुसंधान रिपोर्ट।

बसु, अपर्णा (2014). भारतीय महिला आंदोलन, फाउंडेशन कोर्स, मानवाधिकार, लिंग और पर्यावरण, दिल्ली विश्वविद्यालय।

गुहा, फुलरेनु एवं अन्य (1974). समानता की ओर भारत में महिलाओं की स्थिति पर समिति की रिपोर्ट, भारत सरकार: शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय।

बागरी, थिरानी (2014). भारत का नारीवादी आंदोलन कहाँ जा रहा, द न्यूयॉर्क टाइम्स।

❑❑

उमर बशीर
पीएच.डी. शोधार्थी
हिंदी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय
श्रीनगर

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

हिंदी कविता में कश्मीर की नैसर्गिकता के विविध रंग

कश्मीर पृथ्वी का वह भू-खंड है जो किसी प्रशंसा का ऋणि (मोहताज) नहीं है। 'पृथ्वी का स्वर्ग' उपाधि प्राप्त करने वाला यह भू-खंड प्राचीन काल से ही साहित्यकारों, मनीषियों, विद्वानों तथा इतिहासकारों के आकर्षण का केंद्र रहा है। विश्व के कई प्रसिद्ध महापुरुषों व इतिहासकारों ने इसका उल्लेख अपने इतिहास-वृत्तों में भली-भाँति अवश्य किया है, जिनमें महान वैयाकरण पाणिनि, पतंजलि, तो यंग, सुंग यन, ह्यूँ साँग, फहियान, पंडित कल्हण, अल-बीरूनी, हेरोडोटस, हिकेटियस मिलेटस, डायोनिसस, टॉलेमी, चार्लेस हेनरी विल्सन, एस.सी. रेय आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

भारत सहित विश्व भर में पर्यटन की दृष्टि से सबसे अधिक प्रसिद्ध स्थान यदि कोई है तो वह है कश्मीर; जहाँ की हिमाच्छादित श्रेणियों, उत्तुंग हिमालयी पर्वतों, निर्मल जल-प्लावित सरोवरों, चिनार-चीड़-देवदार की हरिताभ वृक्षावलियों, वैष्णवो-देवी व अमरनाथ के पाप-कलुषहारी दिव्य तीर्थ-स्थल, सरिताओं से युक्त प्राकृतिक सौंदर्य इतना महामहिम और आकर्षणपूर्ण है, जिसको देखते हुए हृदय से अनायास ही वाह निकलती है। अत: निश्चित ही कश्मीर की अनगढ़ प्रकृति का मनमोहक संयोजन ही कविगणों की काव्य-रचना की प्रेरणा हेतु पर्याप्त है।

वस्तुत: किसी भी साहित्य सृजन के लिए विषय-वस्तु असका प्रथम और अनिवार्य तत्त्व होता है। दूसरे शब्दों में कहे तो विषयवस्तु साहित्य की प्रत्येक विधा का प्राण-तत्त्व कहलाता है। इस तत्त्व के अभाव में किसी प्रकार की भी काव्य-रचना संभव नहीं है। किसी भी साहित्यिक कृति की प्रतिपाद्य सामग्री उसकी विषय-वस्तु कहलाती है। एक साहित्यकार सामग्री के माध्यम से ही अपने विचारों, सिद्धांतों, मान्यताओं, अवधारणाओं, अभिमतों का संचार करता है। साहित्य की यह सामग्री अनेक प्रकार की हो सकती है, उदाहरणार्थ—वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, व्याख्यात्मक, ऐतिहासिक, अनुसंधानपरक आदि। विषयवस्तु किसी भी साहित्यकार के विचारों या घटनाओं के एक विशेष संग्रह के प्रयोगात्मक, रचनात्मक एवं कल्पनाशील पक्ष-विपक्ष को वर्णित करता है। अपनी परिवेशगत परिस्थितियों से प्रेरित अथवा प्रभावित होकर एक कवि उसे अनुभव ग्रहण करता है। कवि की उसी अनुभूति की चेतना का आश्रय लेकर कविता जन्म लेती है। अत: इस प्रकार एक कवि विषय-वस्तु के चयन एवं नियोजन की प्रेरणा अपने परिवेश से ग्रहण करता है।

वस्तुत: कश्मीर-सम्बंधित हिंदी कविता में देश-विदेश के अनेक कवियों ने विभिन्न विषयों पर केंद्रित कविताओं का सृजन किया है। जिसमें प्रकृति-वर्णन विशेष प्रवृत्ति के रूप में उभर कर सामने

आती है। वस्तुत: अविश्वसनीय प्राकृतिक सुंदरता के लिए कश्मीर विश्व भर में प्रसिद्ध है। मनीषियों ने इसे स्वर्ग की उपाधि से विभूषित किया है। पृथ्वी का यह भाग वास्तव में भू-स्वर्ग की सार्थकता को भलि-भाँति सिद्ध करता है। यही कारण है कि इस भू-भाग को 'भारत का स्विज़रलैंड' भी कहा जाता है। यहाँ की सुरमय घाटियाँ, छोटी-छोटी पहाड़ियाँ, मीठे जल से भरे नदी-नाले, बड़ी-बड़ी झीलें, पुष्पांजलित बाग़ात, चिनार, देवदार, अखरोटादि के वृक्ष, बर्फ़, हरे-बरे मैदान, वन इत्यादि मानव-मन को आमोद-प्रमोद, हर्ष, शांति, आकर्षण एवं आनंदोल्लास के अथाह प्रवाह में बहा ले जाती है। प्रकृति के इस बहुमूल्य रत्न-कश्मीर को कवि-मन ने भी तीव्र अनुभूत कर अनुभूत कर कविता का रूप दे दिया है।

हिंदी कविता में कश्मीर की सुषमा पर अनेक कवियों ने कई कविताओं का सृजन किया है। राष्ट्रीय धारा के कवियों में सुमित्रानंदन 'पंत', महादेवी वर्मा, श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, शमशेर बहादुर सिंह, हरिकृष्ण प्रेमी, हरिवंशराय बच्चन, सच्चिदानंद हीरायन वात्स्यायन 'अज्ञेय', रामधारी सिंह 'दिनकर', कवि नीरज इत्यादि और मुख्यधारा से इत्तर कवियों में श्रीमती सत्यवती मल्लिक, गंगादत्त शास्त्री 'विनोद', डॉ. रतन लाल शाँत, चंद्रकांत जोशी, सुतीक्षण कुमार 'आनंदम्', पृथ्वीनाथ 'मधुप', डॉ. रमेश कुमार शर्मा, चंद्रकांता, डॉ. मज़हर खान, डॉ. शुभश्री पाणिग्राही, आशमा कौल, बद्रीनाथ भट्ट इत्यादि विशेषरूपेण उल्लेखनीय हैं। आगरा के जोन्हरी ग्राम में जन्मे, स्वच्छंदतावाद (सन् 1930-1940 ई.) के प्रवर्तक, प्रकृति-चित्रण के निपुण कवि श्रीधर पाठक (सन् 1859-1928 ई.) प्रकृति के अत्यधिक प्रेमी थे। उनका अनुरागी चित्त अधिकतर प्राकृतिक सौंदर्य के अद्‌भुत उपकरणों में ही रमा रहा है। प्रकृति-चित्रण में पाठक जी को सर्वाधिक सफलता मिली है। तत्कालीन कवियों की तुलना में उन्होंने सबसे अधिक प्रकृति-वर्णन किया है। उनके द्वारा रचित काश्मीर सुषमा (सन् 1904 ई.) में कश्मीर के अनेक प्राकृतिक एवं धार्मिक स्थानों के सरस चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। घाटी की प्राकृतिक सुंदरता को कवि ने सुक्ष्मता की अनुभूति में पिरोकर कविता में उंडेल दिया है। उन्होंने यहाँ की प्रकृति की तुलना मदारी की थैली से की है, कि जिस प्रकार मदारी अपनी अद्‌भुत कला से अपनी थैली से अनेक बार निरंतर पृथक-पृथक वस्तुएँ निकालकर दर्शकों को चकित कर देता है उसी प्रकार कश्मीर की नाना-रूपी विस्मयजनक प्रकृति भी जादूभरे भिन्न-भिन्न दृश्य दिखाकर प्रेक्षक व सहृदय को स्तब्ध कर देती है—

''धनि-धनि श्री कश्मीर-धरनि, मन-हरनि, सुहावनि।
है यह जादूभरी, विश्व बाज़ीगर थैली॥
खेलत में खुलि परी रशैल के सिर पे फैली॥''[1]

कश्मीर की नैसर्गिक सुषमा ने कवि को अत्यधिक हर्षादित किया हुआ है। वह इस विसम्यजनक नैसर्गिकता पर मोहित होते हैं और उसके आकर्षण की तीव्रता को सूक्ष्म रूप में चित्रित करते हुए अनुप्रास की छटा बिखेरते हैं—

''प्रकृति इहाँ एकांत बैठि निज रूप सँवारति।
पल-पल पलटति भेस छनिक छवि छिन-छिन धारति॥''[2]

काश्मीर सुषमा प्राकृतिक सौंदर्य के विविध उपकरणों की सरस तथा मनोहारी रचना है। पाठक

जी ने प्रकृति से रागात्मक संबंध स्थापित कर तथा अत्यंत सूक्ष्म दृष्टि से उसका निरीक्षण कर अनेक शब्द-चित्रों की सृष्टि की है। आलोच्य रचना में प्रकृति नारी-समान यौवन-मद से उन्मत्त है। कश्मीर सुषमा की भाषा सरस तथा माधुर्य गुण से परिपूर्ण है।

श्री राम नरेश त्रिपाठी ने अपने स्वप्न (1928 ई.) काव्य में कश्मीर की प्रकृति के अनेक प्रसंगों का उल्लेख किया है। उनके द्वारा विरचित 'कश्मीर' नामक एक अन्य कविता में भी कश्मीर की सुंदरता का चित्रण किया गया है। इसके अतिरिक्त हरिकृष्ण प्रेमी कृत यह मेरा काश्मीर; नागार्जुन की चिनार, डल झील; अज्ञेय की देवदार; कवि नीरज कृत कश्मीर के नाम आदि कविताओं में कश्मीर के अतुल्य प्राकृतिक सौंदर्य के अनेक बिंबों की सृष्टि की गयी है। नागार्जुन की 'चिनार' कविता में चिनार के वृक्ष का चित्रण है तो अज्ञेय की 'देवदार' कविता में देवदार के वृक्षों का मनमोहक छायांकन है।

कश्मीर की प्रकृति के संदर्भ में सत्यवती मल्लिक (जन्म सन् 1906 ई., श्रीनगर) ने अपनी पहली कविता ''हब्बा खातून की जीवन संध्या'' में भावपूर्ण बिंबों के माध्यम से पतझड़ का चित्रण किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व लिखित इस कविता में पतझड़ के निराशा भरे परिवेश में भी आशा की किरण दिखायी देती है। कवयित्री यह आशा करती है कि शरद समाप्त होने के पश्चात् वसंत आयेगा और एक नया सवेरा देखने को मिलेगा, समय परिवर्तित होगा, नया युग आयेगा, देश स्वतंत्र होगा, फल-फूल खिलेंगे और नर-नारी जोग दर जोग हब्बा खातून* की समाधि पर आयेंगे और आकर पुष्प-जड़ित हार चढ़ायेंगे।

गंगादत्त शास्त्री 'विनोद' कृत उल्लोल (1964 ई.) काव्य-संग्रह भाव-पक्ष प्रधान रचना है। इस रचना पर अजनबीयत का प्रभाव देखने को मिलता है। आलोच्य कृति में *कश्मीर की सुषमा* (प्रकृति) के विविध रंग बिखेरे गये हैं। वसंत एवं वर्षा ऋतु ने कवि को अत्यधिक हर्षादित किया है। कवि ने कश्मीर की प्राकृतिक सुंदरता को कभी डल झील के रूप में, तो कभी बादाम, सेब, चिनार, देवदार आदि वृक्षों के रूप में नाना रूपी दृश्यों में प्रस्तुत किया है। कवि प्रकृति से शिक्षा लेता भी है और उदाहरण सहित शिक्षा देता है।

श्रीनगर में जन्मे डॉ. रतन लाल शांत कृत खोटी किरणें (सन् 1965 ई.) काव्य-संग्रह में एक ओर अनुभूति की प्रवणता है तो दूसरी ओर कवि कश्मीर की प्रकृति से ऊब का अनुभव करते दिखायी देते हैं। इस ऊब के कारण ही वह अब उस प्रकृति-प्रतीक ढ़ाल में कश्मीरी जनता की चित्तवृत्ति को जानने-समझने के लिए विविश होता है। उन्होंने 'झील की सांझ', 'बसंत गीत', 'महक का जन्म', 'मौसम', 'बर्फ़ हुई घाटी' आदि कविताओं में प्रकृति के अनेक नवीन बिंबों की सृष्टि की है। प्रकृति के बाह्य सौंदर्य से ऊपर उठकर कवि एक नयी सत्ता को स्थापित कर कहता है—

> ''बर्फ़ को क्या दे सकूँगा प्यार
> बर्फ़ होना पड़ता है अरमानों को हर बार''[2]

चंद्रकांत जोशी कृत *दु:ख-सुख* काव्य-संग्रह मूलत: एक प्रौढ काव्य-रचना है। आलोच्य संग्रह में संकलित 'कश्मीर एक अनुभूति' कविता में कश्मीर के लोक-जीवन को और प्रकृति के बाह्य-सौंदर्य के साथ-साथ नर-नारी के सौंदर्य को भी सराहा गया है। कवि ने विशेषत: कश्मीर की प्रकृति का सूक्ष्म चित्रण किया है। एक साधारण कविता होते हुए भी इस रचना का आलंबन सराहनीय है।

आगे क्या होगा? की जिज्ञासा को रोमांचक ढंग से रेखांकित किया गया है। तत्सम-बहुल शब्दावली के प्रयोग से कविता में शब्द-बोझिल का दोष उत्पन्न हुआ है। इसके अतिरिक्त भाव की अपेक्षा शिल्प पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया है।

जम्मू प्रदेश के प्रतिष्ठित कवि सुतीक्षण कुमार 'आनंदम्' की कविताएँ कश्मीर के लोक जीवन और वादी के प्राकृतिक सौंदर्य का मिला-जुला रूप है। *देखती आकाश आँखें* (1968 ई.) और *नौका का इतिहास* (सन् 1970 ई.) काव्य-संग्रह में कहीं कवि प्रकृति को माता समान मानकर वात्सल्य भाव का निर्वाहन करते हैं, तो कहीं प्रकृति के साथ प्रणय-संबंध स्थापित कर सुंदर बिंबों की योजना करते हैं, तो कहीं वादी की सुंदरता के चित्रण में छायावादी भाव-बोध दिखायी पड़ता है।

इसके अतिरिक्त फुटकर कविताओं की शृंखला में भूपेंद्र कुमार 'स्नेही' की ''कश्मीर तुम्हारे बिना'', श्री पृथ्वी नाथ 'मधुप' की ''बौराये बादाम बसंती वायु चली'' में प्रकृति के रंग-बिरंगे बिंब देखने को मिलते हैं। श्री पृथ्वी नाथ 'मधुप' की ''बौराये बादाम बसंती वायु चली'' कविता कल्चरल अकैडमी जम्मू की साहित्यिक पत्रिका *हमारा साहित्य* के वार्षिक अंक सन् 1964 ई. में प्रकाशित हुई है। इस कविता में कश्मीर के वसंत ऋतु के दिनों की प्रकृति का चित्रण किया गया है। ''बादाम बसंती वायु में बौराये हैं, प्राणों ने नव अंगड़ाई ली है, पत्तों पर लाली छाई है, बसंती वायु नवजीवन का वायु लिए बज गामिनी स्त्री की तरह मंथर गति से चल रही है। कवि का मन इस सुंदर मनमोहक परिवेश में प्रफुल्लित हो उठता है, अनुभूतियाँ जाग उठती हैं।''[3]

डॉ. शुभश्री पाणिग्राही के काव्य-संकलन *पन्ने कश्मीर के* (2006 ई.) में कश्मीर के विभिन्न विश्व प्रसिद्ध वस्तुओं, पर्यटक-स्थलों, झीलों, घाटियों, पर्वतों, फल-फूलों, बागों आदि को काव्य का जामा पहनाया गया है। इस रचना में पदे-पदे कश्मीर की नैसर्गिक सुषमा के बहुरंगी चित्र खींचे गये हैं। रचना का भाव पक्ष बड़ा ही मनमोहक है, एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

''तुषार जड़ित पर्वत
सुंदर सब्ज़ बनानी
दूर क्षितिज पर
पहाड़ों के पीछे
निर्मल नीला आकाश
कभी न रुकता
कभी न थकता
पहाड़ी दरिया''[4]

कश्मीर की उभरती हुई कवयित्री शबनम आज़ाद कृत *मेरे कश्मीर के बिखरे रंग* में ''सफेद चादर'' शीर्षक कविता संकलित है, जिसमें शिशिर-ऋतु में हिमपात के फलस्वरूप बर्फ़-रूपी चादर द्वारा घाटी के परिवर्तित परिदृश्य का सुंदर चित्रण किया गया है। शरद की शांत रात के बाद एक नया सवेरा होता है और चारों ओर सफ़ेद ही सफ़ेद बिछोना बिछा हुआ दृष्टिगत होता है—

''रात बीत गई, हुआ है नया सवेरा
सफेद चादर ने चारों ओर बिछाया है डेरा।

चारों तरफ बच्चों का शोर है
कितनी प्यारी आज की भोर है।"[5]

प्रकृति-चित्रण के संदर्भ में अधिकतर कश्मीर-केंद्रित कविताओं का भाव-बोध और शिल्प या तो छायावादी रहा है अथवा प्रयोगवादी। साथ ही इन कविताओं में प्राय: मानवीकरण अलंकारों का प्रयोग बहुत सहज रूप में किया गया है। कश्मीरी शब्दों के नि:संकोच प्रयोग ने कविता में जिज्ञासा को और भी पुष्ट किया है। कुछ कविताएँ तो पाठक को हिंदी लिपि में कश्मीरी भाषा की मिठास का सुखद अनुभव भी करा देती है। इस प्रसंग में वर्तमान के हिंदी जगत की प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती चंद्रकांता जी का नाम लिया जा सकता है। अत: इस प्रकार कश्मीर की प्रकृति पर कविता-कर्म करने वाले अनेकों कवि हुए हैं, जिनमें उपर्युक्त कविगण विशेष रूप से प्रमुख हैं। आलोच्य कवियों के अतिरिक्त अनेक कवियों ने घाटी के बाह्य सौंदर्य से प्रेरित हो काव्य-रचना की है, जिनमें समकालीन कवि-विशेष यथा—हंसराज भारती, आलोक श्रीवास्तव, चंचल डोगरा, आशमा कौल,निर्मल विनोद आदि की छुट-पुट रूप से एक दो फुटकर कविताएँ उल्लेखनीय हैं।

संदर्भ

1. सलिल, सुरेश (सं). श्रीधर पाठक रचनावली. अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रिब्यूटर्स, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2013 ई., पृ. 181
2. वही, पृ. 183
3. शाँत, (डॉ.) रतनलाल. कविता अभी भी. नीहार प्रकाशन, सुभाष नगर, जम्मू, 1997 ई., पृ. 64
4. डॉ. राजकुमार, जम्मू-कश्मीर का स्वातंत्र्योतर हिंदी साहित्य : एक विवेचन. जे. एण्ड के. एकैडमी ऑफ आर्ट, कल्चर एण्ड लैंग्वेजिज़, जम्मू, 1999 ई., पृ. 61
5. पाणिग्राही, (डॉ.) शुभश्री. पन्ने कश्मीर के. एराइज़ पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2015 ई., पृ. 24
6. डॉ. शबनम, मेरे कश्मीर के बिखरे रंग. पृ. 17.

❑❑

आकाश प्रसाद कोटनाला (शोधार्थी)
डॉ. मोनिका रानी (सहायक आचार्य)
हिमालयन गड़वाल विश्वविद्यालय
पौढ़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

शाम्भवी मुद्रा का विद्यार्थियों के तनाव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

शोध सारांश—शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास मुख्यत: आज्ञाचक्र पर ध्यान एकाग्र करने की एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति की मस्तिष्कीय ग्रन्थियों पर त्वरित रूप से प्रभाव पड़ता है। योग शास्त्रों के अन्तर्गत शाम्भवी मुद्रा का मुख्य प्रयोजन आज्ञाचक्र पर ध्यानाभ्यास द्वारा त्रिनेत्र जागरण व मस्तिष्कीय क्षमताओं का विकास करना है। प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य शाम्भवी मुद्रा का विद्यार्थियों के तनाव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है। शोध के अन्तर्गत कोटा प्रतिचयन विधि द्वारा श्री जगद्देवसिंह संस्कृत महाविद्यालय एवं अजरानंद अजरधाम विद्यालय जिला हरिद्वार से 60 विद्यार्थियों का चयन किया गया जिनकी उम्र 15 से 17 वर्ष के मध्य थी। शोध में प्रयोगात्मक एवं नियन्त्रित समूह अभिकल्प का उपयोग किया गया। जिसके अन्तर्गत 30 विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक तथा 30 विद्यार्थियों को अप्रयोगात्मक दो समूहों में विभाजित किया गया है। तत्पश्चात् प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को 3 माह तक सप्ताह में 5 दिन प्रात:काल 30 मिनट नियमित रूप से शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास करवाया गया जबकि अप्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को किसी प्रकार का अभ्यास नहीं करवाया गया। विद्यार्थियों के तनाव का मापन डॉ. एम. सिंह के द्वारा निर्मित तनाव मापनी के द्वारा प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात् दो अवस्थाओं में किया गया। प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण एस.पी.एस.एस वर्जन 21 के द्वारा टी परिक्षण किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण द्वारा यह परिणाम प्राप्त हुए कि प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के तनाव के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात् अवस्था में सार्थक अन्तर पड़ता है जबकि अप्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के तनाव में कोई अन्तर प्राप्त नहीं हुआ। अत: प्रस्तुत शोध के परिणामों के विश्लेषण से निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

कूट शब्द—शाम्भवी मुद्रा, तनाव, विद्यार्थी।

शोध परिचय

प्रस्तुत शोध योग परम्परा के अन्तर्गत मुद्रा विज्ञान पर आधारित है। संस्कृत में मुद्रा शब्द का अर्थ होता है—भाव-भंगिमा। मुद्राएँ अतीन्द्रिय, भावनात्मक, भक्तिपूर्ण और सौन्दर्य बोधक हो सकती हैं। योगियों ने मुद्राओं की अनुभूति शक्ति-प्रवाह की स्थितियों के रूप में की है, जिनका उद्देश्य होता है मनुष्य की प्राणशक्ति को ब्रह्माण्डीय प्राणशक्ति के साथ एक करना। प्राचीन ऋषि-मुनियों द्वारा प्रदत्त योगविद्या में मुद्राओं के अभ्यास से चिकित्सा व चेतना के विकास का ज्ञान निहित है। वस्तुत: मुद्रा

विज्ञान हठयोग का महत्वपूर्ण अंग है। हठयोग की शाम्भवी, अश्विनी, महामुद्रा, ताड़ागी, विपरीतकरणी, उन्मनी, खेचरी आदि कुछ स्थूल मुद्राएं कही जाती हैं। इनमें से कुछ ऐसी मुद्राएं हैं जिनका अभ्यास सामान्य व्यक्ति सरलता से नहीं कर सकता। इनके अभ्यास में विशेष सतर्कता की भी आवश्यकता पड़ती है।

शिव संहिता के अनुसार मुद्राओं के अभ्यास से साधक संसार सागर से पार हो जाता है, यह सर्वकार्य सिद्धि, इन्द्रियजनित, सुख प्राप्ति, मनोकामनापूर्ति, जरा व मृत्यु की नाशक, शरीर में कान्ति, जठराग्नि में उद्दीपक, समस्त रोगनाशक, वीर्य की स्थिरता, नाड़ी संचालन व वायु संचालन एवं स्फूर्ति, जीवन में स्थैर्य व समस्त पापों का क्षय तथा महामन्द भाग्य वालों को भी सिद्धि की प्राप्ति करवाने में सक्षम है। नित्याषोडशिकार्णव मत के तृतीय पटल के अन्तर्गत मुद्रा के आध्यात्मिक पहलू को अभिव्यक्त करते हुए बताया गया है कि—श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि मुद्राः सर्वार्थसिद्धिदा। याभिविरचिताभिस्तु सम्मुखात्रिपुरा भवेद्॥ 54॥ अर्थात् मुद्रा वह योग साधना है जो कि समस्त सिद्धियाँ प्रदान करती है, तथा मुद्रा को प्रयोग में लाने पर भगवती त्रिपुरा प्रसन्न होकर साधक के समक्ष उपस्थित हो जाती है। हठदीपिका में कहा गया है—सुषुम्ना के मुख के अग्रभाग में सोती हुई ईश्वरी कुण्डलिनी को जगाने के लिए साधक को मुद्राओं का अभ्यास करना चाहिए। तन्त्रालोक में देवीयामल के अनुसार—मुद्रा वह पद्धति है जिससे देवता भी द्रवित हो उठते हैं, मुद्राओं में परमात्मा या परा शक्ति का परस्वरूप प्रतिबिम्बित रहता है (32.1-2) (मुद्राविज्ञानः एक परिचय से उद्धृत पृ. 43)। इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि मुद्राओं का अभ्यास मोक्ष की उपलब्धि अथवा परमात्मा की प्राप्ति का एक माध्यम है। प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत शाम्भवी मुद्रा का अनुसंधान किया गया है।

शाम्भवी मुद्रा एक असाधारण क्रिया है। अतः महर्षि घेरण्ड ने इसे एक बड़े घर की बहू की उपमा दी है। इसके विपरीत वेद, पुराण एवं शास्त्रों को सर्वसाधारण स्त्री कहा है, क्योंकि इन्हें सभी जानते हैं व इनसे प्रायः सभी व्यक्तियों का परिचय है। इस प्रकार शाम्भवी मुद्रा वेद-पुराण-शास्त्र से उच्च स्थान रखती है। इस मुद्रा में व्यक्ति आत्मा रूपी ईश्वर का ध्यान करता है। अतः वह अपनी आत्मा का संयोग ब्रह्मा, विष्णु और महेश, तीनों देवों से करता है अर्थात् इन तीनों देवों के साथ वह एकाकार हो जाता है। महर्षि घेरण्ड ने शाम्भवी मुद्रा के अभ्यासी को भगवान शिव, नारायण और सृष्टिकर्ता ब्रह्मा माना है। शाम्भवी मुद्रा का अभ्यासी 'शिव' होता है, 'नारायण' बन जाता है और 'ब्रह्मा' तुल्य हो जाता है। देवी शाम्भवी, अर्थात् पार्वती को सम्बोधित करते हुए भगवान शिव इस सत्य पर प्रकाश डालते हैं और इस बात की सत्यता पर जोर देते हैं कि शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास में पूर्णता प्राप्त व्यक्ति का अवतारी माना जाता है। शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास के लिए किसी सुविधाजनक आसन में बैठकर सिर एवं मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए हाथों को चिन् या ज्ञान मुद्रा में घुटनों के ऊपर रखते हैं। आँखों को बन्द करके पूरे शरीर को शिथिल बनाते हुए चेहरे की ललाट, आँखों एवं आँखों के पृष्ठ भाग की सम्पूर्ण मांसपेशियों को शिथिल करते हैं। तत्पश्चात् धीरे-से आँखें खोलकर सामने किसी बिन्दु पर दृष्टि को एकाग्र करते हैं। फिर दृष्टि को ऊपर की ओर ले जाकर भ्रूमध्य पर केन्द्रित करते हैं। जब सही विधि से इसका अभ्यास होता है तब दोनों भौंहों से नासिका मूल में 'V' की आकृति बनती है। यदि 'V' की आकृति दिखायी नहीं देती, तो इसका अर्थ है कि आँखें भ्रूमध्य की ओर उस प्रकार अभिमुख नहीं है, जिस प्रकार उन्हें होना चाहिए। इसके पश्चात् विचार प्रक्रिया को रोककर बन्द

आँखों के सामने चिदाकाश में ध्यान करने का प्रयास करते हैं। गोरक्षसंहिता के अन्तर्गत गुरु गोरक्षनाथ जी कहते हैं—शाम्भवी मुद्रा केवल मुद्रा मात्र नहीं है वरन् यह शक्ति है, यह भगवतीस्वरूपा तो है ही साथ ही भगवान शिव से उत्पन्न भी हुई है; (मुद्राविज्ञान: एक परिचय से उद्धृत पृ. 27)। शिवसंहिता में इसे गोपनीय, योगसिद्धिकर और सिद्धों का परम दुर्लभ योग कहा गया है। इस प्रकार शाम्भवी मुद्रा के महत्व को देखते हुए प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत तनाव के अध्ययन की एक प्रमुख विषय वस्तु है। मनुष्य जीवन यात्रा में परिवार समाज के साथ स्वयं जीवन के अस्तित्व को बचाने के लिये निरन्तर प्रयत्न करता रहा है। आज मनुष्य की आवश्यकता असीमित होती जा रही हैं परन्तु सीमित साधनों से मनुष्य अपनी असीमित आवश्यकताओं को पूरा करना चाहता है जो कि संभव नहीं है। परन्तु जब इन आवश्यकताओं की पूर्ति किन्हीं कारणों से बाधित होती है अर्थात् वह वांछित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाता तो फिर तनाव उत्पन्न होता है। योग विद्या विशारदों ने प्राणों के पारस्परिक विरोध को तनाव की उत्पत्ति का कारण बताया है। प्राण ऊर्जा का असन्तुलन समूचे कार्यतन्त्र में अतिरिक्त गर्मी भर देता है एवं विचारों में उलझन उत्पन्न कर देता है। इस प्रकार तनाव एवं प्राणशक्ति का असन्तुलन परस्पर पर्यायवाची बन जाते हैं। तनाव मनुष्य की मनोशारीरिक दशा है, यह मनुष्य में उत्तेजना व असन्तुलन उत्पन्न कर देता है। मनुष्य में जब तनाव की स्थिति बनी रहती है, तब मनुष्य कार्य तो करता है लेकिन वह मानसिक रूप से परेशान भी रहता है। इस प्रकार विभिन्न इच्छाएं, लक्ष्य की पूर्ति, अपमान, शारीरिक कमी अतिरिक्त कार्यभार आदि से तनाव उत्पन्न हो सकता है।

प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत मानव जीवन में उपस्थित अनेकानेक संघर्षों एवं चुनौतियों से उत्पन्न विभिन्न प्रकार के तनाव एवं मनोदशाओं की अवस्थाओं को ध्यान में रखते हुए शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है। विभिन्न साहित्यिक सर्वेक्षणों के विश्लेषण से यह तथ्य प्राप्त होते हैं कि यौगिक मुद्राओं एवं यौगिक अभ्यासों का सही ढंग से किया गया प्रयोग अभ्यासकर्ता के तनाव को दूर कर शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को सार्थक रूप से प्रभावित करता है। Parthasarathy, S. *et al.* (2020): ने अपने अध्ययन "Effect of Shambhavi Mahamudra and Pranayama Practice on Stress among Middle Aged Men" में कराईकुडी, तमिलनाडु, भारत से मध्यम आयु वर्ग के 30 पुरुषों का चयन किया जिनकी उम्र 35 से 45 के मध्य थी। चयनित प्रतिभागियों को दो समूहों (प्रयोगात्मक 15 एवं अप्रयोगात्मक 15) में बराबर बांटा गया। प्रयोगात्मक समूह के प्रतिभागियों को छः सप्ताह तक प्रतिदिन शाम्भवी मुद्रा एवं प्राणायाम का अभ्यास कराया गया। इस अध्ययन का उद्देश्य शाम्भवी मुद्रा एवं प्राणायाम का तनाव पर पड़ने वाले प्रभाव को देखना था। छः सप्ताह के पश्चात् प्री टेस्ट व पोस्ट टेस्ट के सांख्यकीय विश्लेषण द्वारा प्राप्त परिणामों से निष्कर्ष निकलता है कि शाम्भवी मुद्रा एवं प्राणायाम का नियत्रंण समूहों की तुलना में प्रयोगात्मक समूह के पुरुषों के तनाव स्तर सार्थक प्रभाव पड़ता है। Kauts, A & Sharma, N (2012): ने शोध अध्ययन "Effect of Yoga on concentration and memory in relation to stress" में योग का प्रभाव विद्यार्थियों के एकाग्रता, स्मृति एवं तनाव स्तर पर देखा। इस अभ्यास में 800 विद्यार्थियों का चयन किया गया एवं उन्हें योग माड्यूल (आसन, प्राणायाम, शुद्धि क्रिया व ध्यान) का अभ्यास

सात सप्ताह तक कराया गया। अन्ततः परीक्षण परिणाम के सांख्यकीय विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि आसन, प्राणायाम, शुद्धि क्रिया व ध्यान का प्रभाव एकाग्रता, स्मृति एवं तनाव पर सार्थक रूप से पड़ता है। अतः कहा जा सकता है कि योगाभ्यास विद्यार्थियों की एकाग्रता, रचनात्मकता, भावनात्मकता स्थिरता, स्मृति विकासक व उनके मनोशारीरिक तनाव को भी नियंत्रित रखता है। Yoshihara, K *et al.* (2014): ने अपने शोध "Effects of 12 week of Yoga training on the somatization, Psychological symptoms, and stress related biomarkers of healthy women" में 24 महिला प्रतिभागियों का चयन किया एवं उन्हें 12 सप्ताह तक योगाभ्यास कराया। इसके पश्चात् उनके कायिक एवं मनोवैज्ञानिक लक्षणों का विश्लेषण प्रयोग के पूर्व एवं पश्चात् किया गया। साथ ही उनके मूड स्टेट के स्तर एवं 8-0 HdG बायोप्रिन तथा कॉर्टीसोल स्तर का भी मापन एवं विश्लेषण किया गया। परिणाम स्वरूप यह निष्कर्ष निकला की महिलाओं के कायिक समस्याओं, मनोरोगों एवं अन्य प्रकार की समस्याओं को दूर करने में योगाभ्यास का सार्थक प्रभाव पड़ता है। अतः कहा जा सकता है कि योगाभ्यास से महिलाओं के तनाव, अवसाद, चिंता, थकान, क्रोध को नियंत्रित किया जा सकता है एवं शरीर व मन में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। मुद्रा अनुसंधान मन, शरीर एवं समग्र अस्तित्व के भावपूर्ण समर्पण के साथ किया जाना चाहिए जिससे परिणाम स्वरूप अभ्यासकर्ता बाह्य अवरोधों से विमुख होकर आत्म अनुसंधान कर सके।

शोध उद्देश्य—प्रस्तुत शोध का उद्देश्य शाम्भवी मुद्रा का विद्यार्थियों के तनाव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है।

शोध परिकल्पना—प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत निम्न परिकल्पना का निर्माण किया गया है—

1. शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
2. शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास करने वाले विद्यार्थियों एवं शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास न करने वाले विद्यार्थियों के तनाव पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

प्रतिदर्श एवं प्रतिदर्श चयन विधि—प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत कोटा प्रतिचयन विधि द्वारा 60 विद्यार्थियों (आयु 15 से 17 वर्ष) का चयन श्री जगद्देवसिंह संस्कृत महाविद्यालय एवं अजरानंद अजरधाम विद्यालय हरिद्वार से किया गया।

अनुसंधान अभिकल्प—प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत प्री-पोस्ट प्रयोगात्मक-अप्रयोगात्मक अनुसंधान अभिकल्प का उपयोग किया गया है। इस अभिकल्प के अन्तर्गत विद्यार्थियों को दो समूहों (प्रयोगात्मक 30 एवं अप्रयोगात्मक 30) में विभाजित करके प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक विधि का अभ्यास करवाया गया है तथा दोनों समूहों के आश्रित चर का अध्ययन प्रयोग प्रारम्भ करने से पूर्व एवं पश्चात् अवस्थाओं के प्राप्त आंकडों का विश्लेषण किया गया है।

प्रयुक्त परिक्षण

प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत तनाव के मापन हेतु डॉ. एम. सिंह के द्वारा निर्मित तनाव मापनी का उपयोग किया गया है। इस मापनी के अन्तर्गत तनाव का मापन अनिश्चितता और उत्तेजना के तहत, बहुत ज्यादा जानकारी, खतरा, अहंकार नियंत्रण विफलता, अहंकार, स्वाभिमान को खतरा, अन्य सम्मान खतरा पर किया गया है।

कार्य विधि

प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत प्रयोग प्रारम्भ करने से पूर्व सभी प्रयोज्यों के तनाव का मापन किया गया। इसके पश्चात् प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास करवाया गया। शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास में अभ्यासकर्ता को सुबह खाली पेट सुविधानुसार आसन पर बैठाया जाता है। सिर एवं मेरुदण्ड को सीधा और हाथों को चिन् या ज्ञान मुद्रा में घुटनों के ऊपर रखवाकर बैठाया जाता है। चेहरे के ललाट को, आंखों एवं आंखों के पृष्ठ भाग की सम्पूर्ण मांसपेशियों को शिथिल रखने का निर्देश देकर, आंखों को अधखुली रखकर नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाकर मन को आज्ञाचक्र पर एकाग्र करके मन को अर्न्तमुखी रखा जाता है। इस विधि का अभ्यास जब सही से होता है तब दोनों भौहों के मध्य नासिका मूल में 'V' की आकृति बनती है। प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों को यह अभ्यास 3 माह तक सप्ताह में 5 दिन नियमित रूप से 30 मिनट तक करवाया गया। तत्पश्चात् प्रयोगात्मक एवं अप्रयोगात्मक दोनों समूहों के विद्यार्थियों के तनाव का पुनःमापन करके प्राप्त प्रदत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया।

सांख्यिकीय विश्लेषण

प्रस्तुत शोध के अन्तर्गत प्राप्त आंकडों का सांख्यिकीय विश्लेषण एस.पी.एस.एस. वर्जन 21 के द्वारा टी परिक्षण के माध्यम से किया गया है।

प्रयोगात्मक व अप्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के तनाव का विश्लेषण

Paired Samples Statistics

Pair	Mean	N	Std. Deviation	Std. Error Mean
1. Shambhvi Stress Pre	48.7667	30	5.02191	.91687
Shambhvi Stress Post	32.3000	30	8.77359	1.60183
2. Control Stress Pre	48.2667	30	6.51223	1.18897
Control Stress Post	51.3333	30	6.64018	1.21232

Table-2 Paired Samples Test

Group	Paired Differences					t	df	Sig. (2-tailed)
	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean	95% Confidence Interval of the Difference				
				Lower	Upper			
Experimental pre & post	16.46667	9.65878	1.76344	12.86002	20.07331	9.338	29	.000
Control pre & post	-3.06667	8.65401	1.58000	-6.29813	.16480	-1.941	29	.062

शोध में सम्मिलित विद्यार्थियों के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात् अवस्थाओं के तनाव के आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि प्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के प्रयोग पूर्व अवस्था

के तनाव के आंकड़ों का मध्यमान एवं मानक विचलन 48.76 ± 5.02 है तथा प्रयोग पश्चात् अवस्था के आंकड़ों का मध्यमान एवं मानक विचलन 32.30 ± 8.77 है। इन दोनों प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात् अवस्थाओं के मध्यमानों की सार्थकता के अंतर के विश्लेषण में प्राप्ताकों का मध्यमान एवं मानक विचलन 16.46 ± 9.65 है जिसका t स्कोर 9.33 है जो कि .00 स्तर पर सार्थक अंतर है। अत: परिकल्पना- शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, निरस्त की जाती है और कहा जा सकता है कि शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

शोध में सम्मिलित अप्रयोगात्मक समूह के विद्यार्थियों के प्रयोग पूर्व अवस्था में तनाव के आंकड़ों का मध्यमान एवं मानक विचलन 48.26 ± 6.51 तथा पश्चात् अवस्था के 51.33 ± 6.64 है। इन दोनों प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात् अवस्थाओं के मध्यमानों की सार्थकता के अंतर के विश्लेषण में प्राप्तांको का मध्यमान एवं मानक विचलन –3.06 ± 8.65 प्राप्त हुआ जिसका t स्कोर –1.94 है जो कि .06 स्तर पर सार्थक अंतर नहीं है। अत: परिकल्पना- शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास करने वाले विद्यार्थियों एवं शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास न करने वाले विद्यार्थियों के तनाव में कोई अन्तर नहीं होगा, निरस्त की जाती है और कहा जा सकता है कि शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास करने वाले विद्यार्थियों के तथा शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास न करने वाले विद्यार्थियों के तनाव में सार्थक अन्तर पड़ता है। प्रस्तुत शोध के विश्लेषण यह तथ्य प्रदान करते हैं कि शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

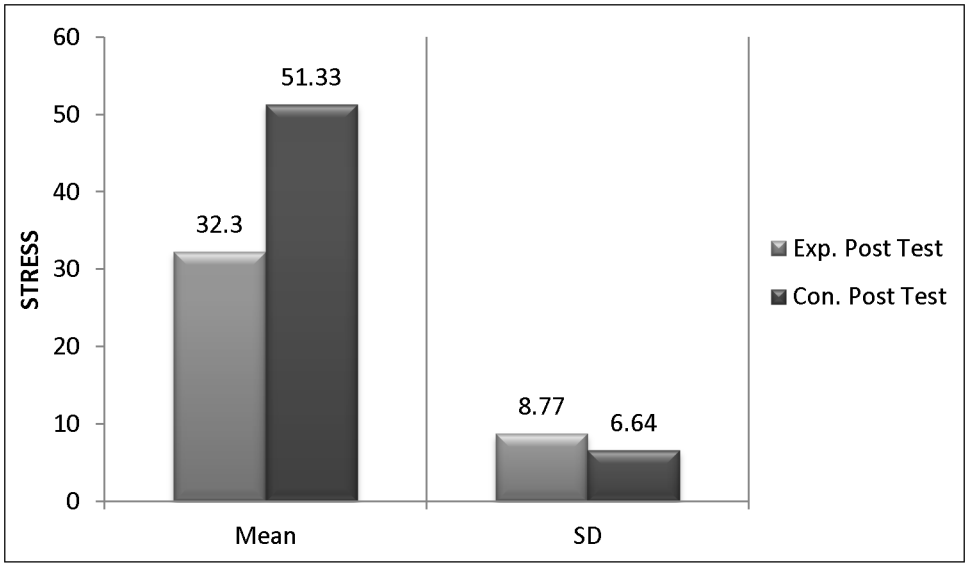

परिणामों की व्याख्या

योग का लक्ष्य मनुष्य की समस्त प्रतिभाओं एवं क्षमताओं का समरसता पूर्वक जागरण करना है। योगाभ्यास से अभ्यासकर्ता का सम्पूर्ण अस्तित्व प्रभावित होता है। प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त की गई

विधि शाम्भवी मुद्रा दोनों भौहों के मध्य अर्थात् आज्ञाचक्र पर मन को केन्द्रित करने की एक साधना पद्धति है। इस शाम्भवी मुद्रा के नित्य अभ्यास से साधक की आध्यात्मिक उन्नति तो होती ही है वरन् शारीरिक एवं मानसिक लाभ भी प्राप्त होते हैं। Bharadwaj, I *et al.* (2013): ने अपने शोध अध्ययन "Effects of Yogic Intervention on Blood Pressure and Alpha EEG level of working women" में स्त्रियों के रक्तचाप एवं उनके मस्तिष्कीय कार्यक्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया। इस दौरान N = 50 कामकाजी महिलाओं (25–39 वर्ष) को 45 दिनों तक योगाभ्यास कराया गया। परिणाम स्वरूप यह देखा गया कि यौगिक इन्टरवेन्शन का प्रभाव आश्रित चरों पर P<0-01 स्तर पर सार्थक रूप से पड़ा। प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकला कि योगाभ्यास महिलाओं के रक्तचाप को तो नियंत्रित रखता ही है साथ ही साथ उनके मस्तिष्कीय क्षमता की भी अभिवृद्धि करता है। Amit (2003): ने अपने शोध अध्ययन "Effect of yoga training on academic stress and achievement of secondary student" में योगाभ्यास का प्रभाव विद्यार्थियों के शैक्षिक तनाव एवं शैक्षिक उपलब्धि में देखा एवं पाया की योगाभ्यास करने वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक वृद्धि होती है। साथ ही विद्यार्थियों के शैक्षिक तनाव में सकारात्मक रूप से कमी देखी गई जो की उनके शैक्षिक उपलब्धि को अत्यधिक प्रभावित करता है। जिसके फलस्वरूप वे परिस्थितियों के साथ अच्छे ढंग से सामायोजन कर सकने में समर्थ हुए। Tyagi, N (2014): ने अपने अध्ययन "Management of Stress & Frustration-Cause & Remedies" में योग के महत्वपूर्ण अभ्यासों अर्थात् आसन, प्राणायाम, त्राटक, ध्यान के माध्यम से व्यक्ति के मनोरोगों जैसे कि तनाव व अवसाद का प्रबंधन आसानी से करना सिखाया है। शोध से यह भी निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि इन योगाभ्यासों की तकनीकों से मानसिक ऊर्जा में वृद्धि भी संभव है एवं उसकी कार्यक्षमता को भी बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार यौगिक शोध अध्ययनों के अध्ययन से निष्कर्ष प्राप्त होता है कि यौगिक ध्यान एवं मुद्राएं विद्यार्थियों के लिए अधिक उपयोगी है। इनके अभ्यास से विद्यार्थी तनाव मुक्त होकर शैक्षिक उपलब्धियों को प्राप्त कर सकता है व स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है। अतः कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों के चिंता व तनाव स्तर को कम करने एवं एकाग्रता व उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति हेतु भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास अन्य अभ्यासों की तुलना में सर्वाधिक प्रभावशाली है।

शोध निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध के परिणामों से यह स्पष्ट है कि शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का विद्यार्थियों के तनाव पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मुद्रा अनुसंधान योग के तंत्र विधान का एक मार्ग है जिसका महत्व सनातन एवं बौद्ध धर्म के दार्शनिकों तथा तांत्रिकों ने एकमत होकर स्वीकार किया है तथा इसके अनुसंधान के सन्दर्भ में प्रचुर मात्रा में साहित्य एवं क्रियात्मक प्रयोग मानव समाज के उत्थान के लिए प्रदान किया। इन्हीं में से एक शाम्भवी मुद्रा के अभ्यास का तनाव पर प्रभावशीलता का अध्ययन प्रस्तुत शोध की प्रासंगिकता को प्रबल सहयोग प्रदान करती है।

संदर्भ

1. **गौतम चमनलाल (2018).** शिव संहिता। संस्कृत संस्थान ख्वाजा कुतुब (वेदनगर) बरेली।

2. **गौतम चमनलाल (2018).** गोरक्ष संहिता। संस्कृत संस्थान ख्वाजा कुतुब (वेदनगर) बरेली।

3. **द्विवेदी श्यामाकान्त (2014).** मुद्रा विज्ञान एवं साधना : नित्यकर्मीय एवं तान्त्रिक मुद्राओं का सर्वांगपूर्ण विवेचन, चैखम्बा सुभारती प्रकाशन।

4. **स्वामी दिगम्बर जी एवं झा पीताम्बर (2011).** हठप्रदीपिका। कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योग मन्दिर समिति लोनावला (पुणे)।

5. **सरस्वती स्वामी निरंजनानन्द (2011).** घेरण्ड संहिता। योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत।

6. **Amit (2003).** Effect of yoga training on academic stress and achievement of secondary student. Unpublished thesis M.Ed. Diss., P. U., Chandigarh.

7. **Bharadwaj, I, Kulshrestha A & Anuja (2013).** Effects of Yogic Intervention on Blood Pressure and Alpha EEG level of working women", Indian Journal of Traditional Knowledge, 12(3): 542-546.

8. **Hamley, D. K (1980).** *Overcoming Tension.* New York : Harper & Row.

9. **Kauts, A., & Sharma, N. (2012).** Effect of yoga on concentration and memory in relation to stress. *ZENITH international journal of multidisciplinary research*, *2*(5), 1-14.

10. **Parthasarathy, S., Dhanaraj, S., Alaguraja, K., & Selvakumar, K. (2020**). Effect of Shambhavi Mahamudra and Pranayama Practice on Stress among Middle Aged Men. *Indian Journal of Public Health Research & Development*, *11*(6).

11. **Tyagi, N (2014).** Management of Stress & Frustration-Cause & Remedies", International Journal of education and Science Research Review, 1(3) : 44-50.

12. **Yoshihara, K., Hiramoto, T., Oka, T., Kubo, C., & Sudo, N. (2014).** Effect of 12 weeks of yoga training on the somatization, psychological symptoms, and stress-related biomarkers of healthy women. *BioPsychoSocial medicine*, *8*(1), 1.

❑❑

डॉ. सल्ला विजय कुमार
वरिष्ठ व्याख्याता
होटल प्रबंध संस्थान
अहमदाबाद

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

ऑनलाइन शिक्षा की धारणा और संवर्धित वास्तविकता : अनुभवात्मक अध्ययन

प्रस्तावना

अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार, एक संसाधन उद्यम के रूप में शिक्षा सीखने की सुविधा, या ज्ञान, कौशल, मूल्यों, नैतिकता, विश्वास और आदतों के अधिग्रहण की प्रक्रिया है। शैक्षिक विधियों में शिक्षण, प्रशिक्षण, कहानी सुनाना सत्र, चर्चा और निर्देशित अनुसंधान शामिल हैं। शिक्षा अक्सर शिक्षकों के मार्गदर्शन में होती है; हालाँकि शिक्षार्थी स्वयं को शिक्षित भी कर सकते हैं। शिक्षा औपचारिक या अनौपचारिक वातावरण में हो सकती है और कोई भी अनुभव जो सीखने को पूरा करने के लिए सोचने, महसूस करने या कार्य करने के तरीके पर रचनात्मक प्रभाव डालता है, उसे शैक्षिक माना जा सकता है।

शिक्षा एक ऐसे समाज के ज्ञान हस्तांतरण पर जोर देती है, जो सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों है, जिसे पाठ्यक्रम के संतुलन के रूप में तैयार किया गया है। वास्तविक कक्षाएं निम्नलिखित बिंदुओं को सीखने की कुंजी रही हैं—प्रमुख रूप से विषय को अवशोषित करना, संदेह का समाशोधन, व्यावहारिक एवं बातचीत और स्थितिजन्य का समस्या समाधान और आत्मविश्वास। ऐसी प्राचीन विधियाँ रही हैं जो लगातार पुनर्पूंजीकरण, सूचनाओं को पुनर्गठित करने और सामने आई समस्याओं को हल करने के साथ अपनी योग्यता साबित कर रही हैं।

संवर्धित वास्तविकता (ए आई) एक वास्तविक दुनिया के वातावरण का एक परस्पर क्रिया का अनुभव है जहां वास्तविक दुनिया में रहने वाली वस्तुओं को कंप्यूटर से उत्पन्न अवधारणात्मक जानकारी द्वारा बढ़ाया जाता है। यह स्थानीय पर्यटन हितधारकों और अंतरराष्ट्रीय छात्रों के लिए अनुभवात्मक सीखने के साथ सामुदायिक जुड़ाव को बढ़ावा देने के अवसरों पर चर्चा करता है। यह इस क्षेत्र में अनुभवात्मक शिक्षा पर साहित्य में भी योगदान देता है।

शैक्षिक व्यवस्था

वेदों की बात करें तो शिष्यों ने तीन विधियों का प्रयोग करके सीखा, जिनका उल्लेख नीचे किया गया है—

1. याद रखना

2. सही उच्चारण के साथ
3. उपयोग और निष्कर्ष को समझना

इन तीन बिंदुओं में, याद रखने की प्रक्रिया एक बड़ी भूमिका रही है। स्कूलों की बात करें तो प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालय अच्छे शिष्टाचार और नैतिकता सिखाते हैं और उच्च शिक्षा स्नातकों को सीखे हुए बनाना सुनिश्चित करती है और समाज के लिए कर्मियों को व्यक्त करता है। पाठ्यचर्या विकास के माध्यम से नवीनतम रुझानों तक प्रसार प्रक्रिया के विभिन्न आयाम रहे हैं। यह देखना महत्वपूर्ण है कि सीखने के भागफल और मूल्यांकन मानकों को संबोधित करते हुए, समाज के बेहतर नागरिकों को विकसित करने के लिए ज्ञान और कौशल निगमन की प्रभावशीलता देखी जा सकती है।

शिक्षा में तकनीकी प्रगति

पूरे शिक्षा चक्र में प्रौद्योगिकी का एकीकरण अपरिहार्य हो गया है; जिससे शिक्षा के प्रसार विभिन्न तरीकों से करना के लिए अवसर पैदा होते हैं। उपकरण और विद्युत प्रौद्योगिकी का उपयोग संचार का एक तरीका पाया गया है जिसे विभिन्न अर्थोपाय और अनुप्रयोगों के माध्यम से पहुँचा जा सकता है। सूचना तक स्वचालन पहुंच ने शिक्षार्थी को स्कूल सुविधा में प्रसारित ज्ञान को जोड़ने के लिए पंख दिए हैं। छात्रों को सीखने की डिग्री और प्रभाव आभासी कक्षा में उनके लाभार्थी होने के रास्ते में आने वाली चुनौतियों का सामना कर सकते हैं।

सैद्धांतिक ज्ञान निगमन के कई स्रोत हैं, लेकिन व्यावहारिक रूप से आने पर, किसी कार्य या कौशल का प्रदर्शन और व्यावहारिक वांछित के रूप में प्रभावी नहीं हो सकते हैं। ऑनलाइन मोड में शिक्षक तथा छात्र युगल के बीच भावनात्मक और सामाजिक संपर्क की कमी हो सकती है लेकिन इसमें छात्रों में संस्कृति जागरूकता की कमी है। शैक्षिक शोध में परिपक्वता बढ़ने पर, शिक्षक के विषय शोध छात्रों तक पहुंचाने की शिक्षकों की तैयारी का स्तर पर दबाव बढ़ गया है।

कोविड-19 का आगमन

दुनिया में कई महामारी आई है। हम महामारी कोविड-19 देख रहे हैं। कोविड-19 के कारण शैक्षणिक संस्थान के अभूतपूर्व रूप से बंद होने से सतत शिक्षा के लिए ऑनलाइन शिक्षण प्लेटफार्मों का दायरा बढ़ गया है। शिक्षा में नयापन समायोजित करने की अपेक्षा से शिक्षकों द्वारा एक उल्लेखनीय दक्षता पेश कर रहे हैं।

ऑनलाइन शिक्षण

ऑनलाइन शिक्षण इंटरनेट और कंप्यूटर-आधारित तकनीक पर आधारित है, जो सीखने का एक अधिक सक्रिय और अधिक समय-लचीला तरीका है, और किताबें लेने की जरूरत नहीं है। परियोजना आधारित शिक्षण टीम के ऑनलाइन समन्वय, संसाधनों और व्यक्तिगत जिम्मेदारियों के लिए असाइनमेंट के विभाजन के माध्यम से एक परियोजना शुरू करते समय योजना के अगले स्तर को आत्मसात करता है। इस ऑनलाइन शिक्षण में कुछ बाधाएं हैं जैसे छोटे स्क्रीन आकार या सामूहिक

चर्चा की कमी और दिमागी व्याकुलता शामिल हो सकते हैं लेकिन सर्वेक्षण में 100% छात्रों ने जवाब दिया है कि छात्र इसे करना चाहते हैं।

छात्रों की धारणाओं का एक मिश्रित राय रहा है, कुछ समझने में असमर्थ हैं, कुछ छात्र झिझकते हैं, कुछ छात्र वर्चुअल लर्निंग के साथ सहज हैं, कुछ छात्रों को कक्षा को एक सर्वकालिक सर्वोत्तम विकल्प के रूप में अनुकूलित करना और विचार करना मुश्किल लगता है। कुछ ऑनलाइन प्रसार की गति को समझने में धीमी हैं। कुछ छात्रों के पास नेटवर्क की समस्या है। विद्युत उपकरण और परिवार के सदस्यों की सलाह की कमी के कारण अच्छी संख्या में छात्रों के लिए कक्षा में भाग लेना और अपना स्कूल नियत कार्य जमा करना मुश्किल हो जाता है।

संबंधित मामले के बिंदु

- अधिकांश छात्रों ने स्वीकार किया कि शुरुआती दिनों में यह सरल दिखता था लेकिन कक्षा में भौतिक उपस्थिति की तुलना में कठिन हो गया। उन्हें कठिनाई का सामना करना पड़ा क्योंकि ऑनलाइन मोड में व्यावहारिक उपस्थिति अनदेखी हो जाती है।
- आधे छात्रों ने पारिवारिक बातचीत, पृष्ठभूमि शोर, नेटवर्क, दोस्तों की बातचीत की कमी और समूह गतिविधि, ऑनलाइन अधिसूचना आदि के कारण घरेलू कक्षा में सीखने को प्रभावित करने वाले मुद्दों को उद्धृत किया है।
- छात्र सीखने के मनोविज्ञान पर कम संभव रखरखाव।

निर्णायक सुझाव

- सर्वेक्षण किए गए छात्र ऑनलाइन मोड के अभ्यस्त नहीं थे बल्कि धीरे-धीरे शामिल किए गए थे।
- संकाय अपना काम बेहतर तरीके से कर रहे हैं, अपने अध्याय ऑनलाइन वितरित को उन्नयन कर रहे हैं।
- ऑनलाइन कक्षाएं छात्रों में जिम्मेदारी को खत्म कर सकती हैं, लेकिन नियमित कक्षाओं के अंतराफलक, अध्ययन कार्य, घटनाओं और परियोजनाओं के माध्यम से शिक्षक छात्रों को जिम्मेदार बनाना सुनिश्चित कर रहे हैं।
- ऑनलाइन शिक्षण एकतरफा हो सकता है, यदि छात्र भाग नहीं लेते हैं या समझने में कठिनाई के संबंध में प्रश्न नहीं पूछते हैं।
- परेशान और अनुपस्थित छात्रों को विषय वितरण के अनुशासन और प्रभावशीलता के लिए आवश्यकता है। आत्म-अनुशासन कुंजी है।
- विषय विशिष्ट की अग्रिम सुपुर्दगी किसी भी सत्र के लिए फायदेमंद लग सकती है।

- सीखने, प्रदर्शन और संबंधित वीडियो को बढ़ाने के लिए मनोरंजन के तत्वों को शामिल करें।
- उन छात्रों के लिए पूर्व दर्ज कक्षाओं का प्रावधान रखें जिन्हें समझने में वक्त लगता है।

निष्कर्ष

पढ़ने, सुनने, देखने और लिखने की भूमिका सीखने का सार है और मौखिक निर्देश का हमेशा प्रमुख योगदान होता है। इसलिए शिक्षक छात्र के आपसी गठबंधन एक उपयोगी सकारात्मक दिशा है। सीखने के अभ्यास की दिशा में अपनी सीख की रणनीतियों का अनुकरण करना, नए के बराबर है।

❑❑

डॉ. प्रीति गुप्ता
असिस्टेंट प्रोफेसर, चित्रकला विभाग
एच.वी.एम. (पी.जी.) कॉलेज
रायसी, हरिद्वार, उत्तराखण्ड

ATISHAY KALIT
Vol. 9, Pt. A
Sr. 15, 2022
ISSN : 2277-419X

राजस्थान की लोककला पर आधुनिकता एवं वैश्वीकरण का प्रभाव

सारांश—आधुनिकता ने सभी क्षेत्रों में अपना प्रभाव दिखाया तो फिर लोक कला कैसे अछूती रह सकती थी ? आधुनिकता सतत परिवर्तनशील धारणा है, जो परम्परा के विरूद्ध होते हुए भी परम्परा से उष्मित होती है। जिस प्रकार पतझड़ के पश्चात वृक्ष मे कोपलें आती हैं और कोपलें वृक्ष को चिरनवीन रूप प्रदान करती हैं। वृक्ष को काटकर समाप्त करके नवीन वृक्ष पाना हमारा लक्ष्य नहीं होता, हमारा अभीष्ट उसी वृक्ष को नवीन रूप में देखकर उत्साहित, प्रफुल्लित और प्रसन्न होना होता है। इसी प्रकार लोक कला को आधुनिक परिवेश में सार्थक रूप में प्रस्तुत कर नवीनता लाना ही लक्ष्य है। लोक कला स्थानीय खास तरह से आवरण में रहने वाली कला बनकर रह गई थी परन्तु अब उन्ही लोक कलाओं को समूह, संस्थाओं और लोक कलाकारों के प्रयोगों एवं प्रयासों के द्वारा आधुनिक रूप में परिवर्तित करके उसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई है।

इस आधुनिकता के युग में यह लोक कला सात समुंदर पार अपनी सीमाओं को लांघकर देश-विदेश में तो शोभा पा रही हैं वर्तमान में देश-विदेश का ध्यान भी हमारी लोक कलाओं की ओर आकर्षित होने लगा है। विदेशियों को अपनी लोक संस्कृति और लोक कला की गरिमा से परिचित कराकर हम स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते है।

आधुनिक चित्रकला से वर्तमान का संकेत मिलता है जबकि लोककला से लोक का संकेत मिलता है। कला के पुजारी कला को जीवन की अमूल्य निधि समझते हैं। वे कला पर अपना एकाधिकार समझते हुए संसार को केवल सौंदर्य के माध्यम से ही ग्रहण करना चाहते हैं।[1] कला से मन को प्रसन्नता ही नहीं होती, वह अपने प्रभावों से मन का निर्माण भी करती है। डॉ. आनंद कुमार स्वामी के मतानुसार—''कलाकार किसी विशेष प्रकार का व्यक्ति नहीं होता, प्रत्युत, इसके स्थान पर प्रत्येक व्यक्ति, एक विशेष प्रकार का कलाकार अवश्य होता है।''[2]

आधुनिकता लोक कला को क्रमबद्ध ढंग से आगे नहीं बढ़ाती वरन् उसे अपना ध्येय बनाकर नवीन रूप, माध्यम और प्रस्तुतीकरण के द्वारा आधुनिक स्वरूप प्रदान करती है। आधुनिकता यदि अपनी परम्परा और लोक कला से जुड़ी रहेगी तभी वह ग्रहीत होगी। परम्पराओं को नवीन आवश्यकताओं के रूप में अविष्कृत कर हम अपनी रचनात्मकता को व्यापक तथा लोक संस्कृति का पुनराभिकल्पन कर आधुनिकता को समृद्ध बना सकते हैं।[3] आधुनिक भारतीय चित्रकला में लोक कलाओं की प्रेरणाओं का समारम्भ का श्रेय यामिनी रंजन राय को है।[4] उन्होंने लोक कलाकारों से रंगों, आकारों तथा कौशल

के रहस्य को पा लिया था। श्यामचरण दूबे जी जैसे विद्वान भी मानते हैं कि यदि हम कल से आज और आज से कल की ओर जाते है, तो हम अपनी सांस्कृतिक विरासत से बहुत कुछ ले लेंगे।[5] आधुनिकता लाने के लिए हमें अपनी जड़ों आदि स्रोतों से जुड़ना होगा।

आधुनिकता सतत् विरोध को स्वीकार करती चलती है यथा—पुरानेपन का विरोध, यथा स्थिति का विरोध। गांधी जी ने कहा था—''जबसे चरखे के सामने मिल खड़ी हुई है तभी से चरखा मिल के खिलाफ बगावत का प्रतीक बन चुका है।''[6]

राजस्थान के लोक कला भंडार में ऐसे अनेकानेक कलारूप हैं जिनकी समाज में कालानुसार भूमिका रही है, वर्तमान में ऐसे कलारूप काल एवं परिस्थिति के अनुकूल समायोजन की क्षमता रखते हैं। ऐसे माध्यमों में कांवड़, पड़, माण्ड़ने है। इन कलारूपों ने विदेशों में तो अपनी तकनीक एवं चित्रण विधान के कारण धूम मचाई परन्तु दुर्भाग्य भारत के विशेषकर राजस्थान के लोग नहीं जान सके कि हमारी कला इतनी महान है।

शताब्दियों तक चली आने वाली पिता से पुत्र, माता से पुत्री तक वंशानुगत विस्तृत एवं हस्तान्तरीय लोक कला देश-विदेश में अपने सर्वथा अनूठे चित्रण में मनमोहनक रंगों की अनुपम छटा बिखेर रही है।

राजस्थान की लोक चित्रण परम्परा में अनेकानेक माध्यमों का प्रयोग हुआ है। जिसमें कांवड़, कपड़े पर चित्रित पड़, घर का आंगन अर्थात मांड़ने और थापे आदि प्रमुख हैं। इनकी चित्रण शैली लगभग एक सी प्रतीत होती है। पड़ में चित्रित होने वाली सभी आकृतियां कांवड़ में चित्रित आकृतियों के समान है। कांवड़ में लकड़ी पर रामायण, महाभारत के प्रसंग को लेकर चित्रण हुआ है जबकि पड़ में कपड़े पर लोक देवताओं की कथाओं को चित्रित किया गया है। माण्ड़ने और थापों में प्रतीकात्मक रूप में सुख, समृद्धि की और मंगल की कामना की जाती है। ये माण्ड़ने जहां समृद्धि के प्रतीक के रूप में बनाए गए, वही दीवार और भूमि पर कलात्मक अलंकरण के लिए भी बनाए गये हैं। जमीन पर बने माण्ड़ने मांगलिक एवं त्योहारों से जुड़े है। टोंक में अहीरों के घरों में माण्ड़ने नवीन रूप में

होते है। झिलाय, निवाई, वनस्थली में वैश्य ब्राह्मणों के परिवार में वृहद व अलंकृत माण्ड़ने विविधता लिए होते है। मेवाड़ के माण्ड़ने अधिक परिष्कृत नहीं होते।

ग्रामीणों की धार्मिक व सौन्दर्यात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु ही लोक कलाएं प्रचलित हुई हैं। धार्मिक भावनाओं से अभिभूत होकर लोक देवी-देवताओं के प्रति लोक विश्वास व असीम श्रद्धा दर्शकों को अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। लोकविश्वास की अपनी मान्यताएं और स्थापनाएं है। बांझ की कोख हरी-भरी करने की सामर्थ्य सामान्यत: देवियों में होती है। अहोई माता जहां पुत्रों की रक्षा करती हैं। वहीं करवा माता अर्थात माता पार्वती पत्नी को सदासुहागन व पति की लंबी आयु करती हैं। ईसर व गौर की पूजा अमर सुहाग के लिए राजस्थान में परम्परागत रूप में की जाती है। लोक देवता कहीं सर्पों के देवता हैं तो कहीं गायों की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देते हैं। लोक कलाकारों की चित्र संरचना में सूक्षमता, घनिष्ठता एवं संश्लिष्टता का बहुआयामी संसार प्राप्त होता है। एक ही चित्र में जंगल, घर, आदमी, विवाह, युद्ध, जन्म-मरण, पशु-पक्षी अपनी समग्र सक्रियता में उपस्थित रहते है। चित्र में पूरे एक संसार की रचना होती है। लोक चित्रों में चित्रण ही उनकी तरोताजगी का आधार है। धार्मिक और सामाजिक उद्देश्य के प्रति समर्पित लोक कलाकार आधुनिक कलाकार के समान आत्मकेंद्रित होकर चित्रण नहीं कर सकता।

लोक कला के क्षेत्र में आधुनिकता का समावेश कांवड़, पड़, माण्ड़ने और थापों पर भी दृष्टिगोचर हुआ है। सभी प्रकार की लोक कलाओं में कुछ न कुछ नवीनता के दर्शन अवश्य ही दिखाई देते हैं। वो आधुनिकता तकनीक, माध्यम, चित्रतल, रंगों आदि के माध्यम से स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं। लोक चित्रकारों ने लोक कला का भविष्य सुरक्षित रखने हेतु भी यह कदम उठाये हैं अन्यथा ये लोक कलाएं भी कब की काल के गाल में समा चुकी होती।

राजस्थान धार्मिक लोक कला रुपों में निम्न प्रकार की आधुनिकता दृष्टिगोचर होती है—

1. विषय-वस्तु में नवीनता एवं आधुनिकता
2. चित्रफलक एवं आकार में नवीनता एवं आधुनिकता
3. वर्ण विधान में नवीनता एवं आधुनिकता
4. संयोजन में नवीनता एवं आधुनिकता।